औपनिवेशिक भारत में हिंदी का विज्ञान-लेखन

शुभनीत कौशिक
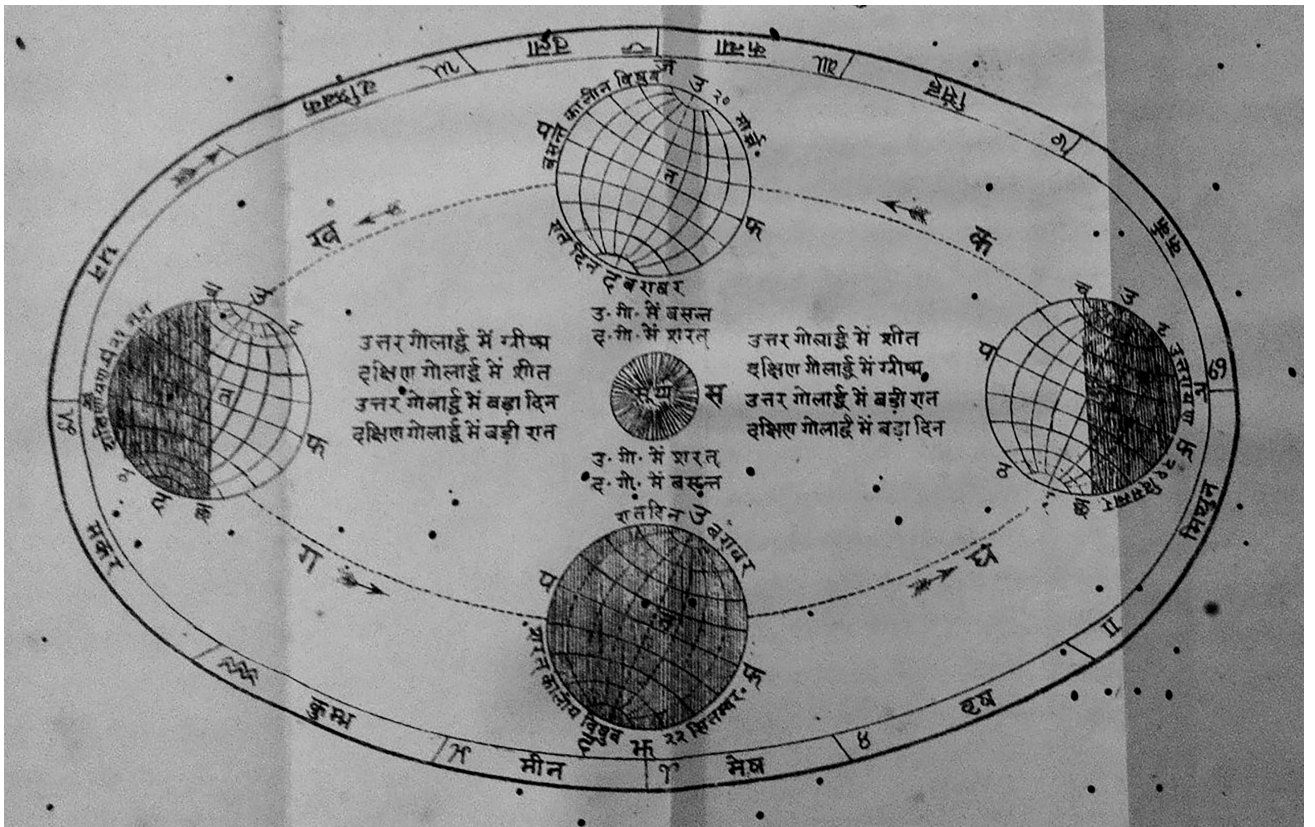
उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में ब्रिटिश भारत में प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलों के खुलने और स्कूली शिक्षा के प्रसार के साथ ही भारतीय भाषाओं में विभिन्न विषयों की पाठ्य-पुस्तकों की ज़रूरत भी शिद्दत से महसूस की गयी। इस क्रम में इतिहास, भूगोल, विज्ञान समेत तमाम विषयों की पाठ्य-पुस्तकें भारतीय भाषाओं में लिखी गयीं या अंग्रेज़ी से अनूदित की गयीं। इससे पहले भी ईसाई मिशनरियों और देश भर में जगह-जगह स्थापित टेक्स्ट-बुक सोसाइटी ने, कुछेक उत्साही ब्रिटिश अधिकारियों और भारतीयों ने ऐसी पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने के प्रयास ज़रूर किये

थे। पर उनका दायरा काफ़ी सीमित था। पश्चिमोत्तर प्रांत में तो स्थिति और भी जटिल थी। यहाँ स्कूली पाठ्य-पुस्तकों की भाषा बनने के लिए हिंदी और उर्दू में परस्पर होड़ भी लगी हुई थी। हिंदी की बात करें तो उन्नीसवीं सदी के दौरान ओंकार भट्ट, राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद, मुंशी अम्बिका प्रसाद और बालकृष्ण शास्त्री खण्डकर सरीखे विद्वानों ने हिंदी में विज्ञान समेत विविध विषयों की पाठ्य-पुस्तकें लिखने में बड़ी भूमिका निभायी।

राजा शिवप्रसाद ने *इतिहासतिमिरनाशक, विद्यांकुर* और *भूगोलहस्तामलक* सरीखी पाठ्यपुस्तकें लिखीं।[1] *विद्यांकुर* में जहाँ उन्होंने प्राकृतिक विज्ञानों और समाज-विज्ञान के बारे में लिखा, वहीं तीन खण्डों वाली अपनी पुस्तक *इतिहासतिमिरनाशक* में उन्होंने भारतीय इतिहास का विवरण प्रस्तुत किया। 1859 में लिखी गयी *भूगोलहस्तामलक* में राजा शिवप्रसाद ने पृथ्वी पर मानवों की उत्पत्ति का संक्षिप्त परिचय देने के साथ ही भौतिक भूगोल का भी विस्तारपूर्वक वर्णन किया। इस पुस्तक में उन्होंने संसार के महाद्वीपों का परिचय कराने के साथ-साथ एशिया महाद्वीप और उसके अंतर्गत भारतीय उपमहाद्वीप का परिचय देते हुए नेपाल, कश्मीर, सिक्किम, भूटान और पर्वतीय राज्यों के बारे में भी लिखा।[2] राजा शिवप्रसाद ने इसी किताब के एक अध्याय में भारत के विभिन्न इलाक़ों में बसे हुए सामाजिक समूहों के शारीरिक लक्षणों और उनके व्यवहारों के बारे में भी लिखा। यह लिखते हुए शिवप्रसाद ने कई औपनिवेशिक रूढ़ियों व पूर्वाग्रहों को अपने लेखन में जस-का-तस अपना लिया। उनके लेखन में परिलक्षित होने वाली इस प्रवृत्ति पर टिप्पणी करते हुए इतिहासकार मनु गोस्वामी ने लिखा है : 'शिवप्रसाद द्वारा अपनी किताब में विभिन्न क्षेत्रों के लोगों के विषय में लिखते हुए औपनिवेशिक रूढ़ियों का इस्तेमाल असल में औपनिवेशिक भारत में ब्रिटिश नृजातीय विमर्श द्वारा प्रचलित सामान्यीकरण की प्रक्रिया की नक़ल करने की कोशिश है।'[3]

भूगोलहस्तामलक के लिखे जाने से लगभग दो दशक पूर्व ओंकार भट्ट *भूगोलसार* (1841) लिख चुके थे। ज्योतिषी रहे ओंकार भट्ट की यह किताब गुरु-शिष्य के बीच संवाद की शैली में लिखी गयी थी। इसमें ओंकार भट्ट ने कॉपरनिकस के खगोलीय सिद्धांतों की तुलना भारतीय खगोल ग्रंथों मसलन *सिद्धांत शिरोमणि* में वर्णित सिद्धांतों से की और कॉपरनिकस के खगोलीय सिद्धांतों को उचित ठहराया था।[4] उर्दू की बात करें तो उन्नीसवीं सदी के मध्य में दिल्ली कॉलेज के मास्टर रामचंद्र सरीखे शिक्षकों ने उर्दू में विज्ञान के प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय भूमिका निभायी। मास्टर रामचंद्र ने *फवायद-उल-नज़रीन* नामक पत्र का प्रकाशन भी शुरू किया, जिसने उर्दू में वैज्ञानिक विचारों के प्रसार में अहम योगदान दिया। मास्टर रामचंद्र ने गणित की दो उत्कृष्ट किताबें भी लिखीं : *अ ट्रिटाइज़ ऑन द प्रॉब्लम ऑफ़ मैक्सिमा ऐंड मिनीमा* (1859) और *अ स्पेसिमन ऑफ़ न्यू मेथड ऑफ़ डिफरेंशियल कैलकुलस* (1863)। इन दोनों किताबों का विश्लेषण करते हुए इतिहासकार एस. इरफ़ान हबीब और ध्रुव रैना ने इन्हें ऐसी गणितीय परियोजना कहा है, जिसका उद्देश्य बीजगणित की उस लुप्त होती जा रही परम्परा को पुनर्जीवित करना था, जिसे हिंदुओं और अरब के निवासियों ने विकसित किया था।[5] मास्टर रामचंद्र के शिष्य रहे मुंशी ज़काउल्लाह ने भी गणित की किताबों का उर्दू में अनुवाद किया। विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद की यह प्रक्रिया ज्ञान के प्रचार-प्रसार के साथ ही एक स्तर पर आधुनिकता और परम्परा के साक्षात्कार की भी परिचायक है। इस परिघटना को रेखांकित करते हुए इतिहासकार ज्ञान प्रकाश ने ठीक ही लिखा है : औपनिवेशिक संदर्भ में अनुवाद का

---

[1] राजा शिवप्रसाद के जीवन-परिचय और उनके कृतित्व के विश्लेषण हेतु देखें, वीर भारत तलवार (2005).

[2] शिवप्रसाद (1859).

[3] मनु गोस्वामी (2004) : 192.

[4] *भूगोलसार* के विस्तृत आलोचनात्मक विश्लेषण हेतु देखें, ज्ञान प्रकाश (2000) : 64-69.

[5] ध्रुव रैना और एस. इरफ़ान हबीब (1989) : 2082; साथ ही देखें, ध्रुव रैना और एस. इरफ़ान हबीब (2004) : 3-59.

मतलब ज्ञान की एक अजनबी दुनिया और देशज दुनिया के बीच यात्रा, आधुनिकता व परम्परा के बीच संवाद, और उपनिवेशों में शासक और शासितों के बीच सत्ता संबंध की पुनर्रचना का भी द्योतक है।[6]

पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण की प्रक्रिया को ध्यान में रखकर 1877 में भारत सरकार ने भारतीय स्कूलों में प्रचलित पाठ्य-पुस्तकों की जाँच के लिए ई.सी. बेली की अध्यक्षता में एक समिति बनायी।[7] इस समिति ने अपनी रिपोर्ट में अन्य विषयों के साथ-साथ भूगोल, गणित और भौतिक विज्ञानों की पाठ्य-पुस्तकों की भी जाँच-पड़ताल की। अपनी रिपोर्ट में समिति ने तब प्रचलित जिन पुस्तकों को संतोषजनक बताया वे थीं : बर्नार्ड स्मिथ की अंकगणित की किताब, टॉड हंटर की बीजगणित की किताब, पॉट की *यूक्लिड* पर आधारित किताब और हक्सले की विज्ञान की किताबें। भूगोल के लिए समिति ने ऐंडरसन, क्लाइड, ब्लाख़मान और पियरी लाल शोम द्वारा लिखित पाठ्य-पुस्तकों की सिफ़ारिश की।[8] समिति ने यह सुझाव भी दिया कि सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं में स्वास्थ्य, अर्थव्यवस्था, विधि, भू-राजस्व बंदोबस्त सरीखे विषयों पर पुस्तकें तैयार कराई जानी चाहिए। यह सुझाव देते हुए समिति ने भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक शब्दावली के अभाव के प्रश्न पर भी विचार किया। इस मुद्दे पर समिति के सदस्यों में दो मत थे। एक ओर वे लोग थे, जो अंग्रेज़ी की वैज्ञानिक शब्दावली को जस-का-तस अपनाने के पक्षधर थे। तो दूसरी ओर वे लोग थे, जो वैज्ञानिक शब्दावली के भारतीय भाषाओं में अनुवाद के हामी थे। इस दूसरे धड़े का प्रतिनिधित्व कर रहे थे प्रसिद्ध भारतविद् राजेंद्र लाल मित्र (1824-1891)। राजेंद्र लाल मित्र ने अपने सुझाव में वैज्ञानिक शब्दावली को छह श्रेणियों में बाँटा। इनमें से पहले चार श्रेणियों के शब्दों का उन्होंने भारतीय भाषाओं में अनुवाद करने का सुझाव दिया। इनमें आम बोलचाल की भाषा में इस्तेमाल हो रहे शब्द, व्यापारियों और कारीगरों द्वारा प्रयोग किये जा रहे शब्द, मूर्त व अमूर्त विचारों को प्रकट करने वाले शब्द शामिल थे। पर बाक़ी दो श्रेणियों के लिए उन्होंने अंग्रेज़ी अथवा अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक शब्दावली को अपनाने का सुझाव दिया। इन दो श्रेणियों में रसायनों, वैज्ञानिक उपकरणों के साथ-साथ पौधों और पशु-पक्षियों के वैज्ञानिक नाम शामिल थे।

औपनिवेशिक विज्ञान की सीमाएँ और भारतीयों के हस्तक्षेप

उपनिवेशों में आधुनिक विज्ञान के प्रसार की महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक परिघटना का विद्वानों ने विस्तारपूर्वक अध्ययन किया है। ऐसे विद्वानों में जॉर्ज बसाल, रॉय मैकल्योड, डैनियल हीड्रिक आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। भारतीय संदर्भ में, औपनिवेशिक विज्ञान की सीमाओं के बारे में लिखते हुए विज्ञान के इतिहासकार दीपक कुमार लिखते हैं कि औपनिवेशिक विज्ञान एक आश्रित/निर्भर विज्ञान है, जहाँ विज्ञान के जिज्ञासापरक शोध पर व्यावहारिक विज्ञान का परिणामोन्मुख शोध हावी हो जाता है।[9] वहीं इतिहासकार प्रतीक चक्रवर्ती औपनिवेशिक/पश्चिमी विज्ञान को एक ऐसे इदारे के रूप में देखते हैं, जहाँ विज्ञान ख़ुद को तमाम तरीक़ों से राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक वर्चस्व के रूप में अभिव्यक्त करता है।[10] औपनिवेशिक विज्ञान की इन सीमाओं के बावजूद भारतीयों ने आधुनिक विज्ञान का स्वागत किया और भारतीय भाषाओं में इसके प्रचार-प्रसार का कार्य भी बख़ूबी अंजाम दिया। ऐसे भारतीयों में मास्टर रामचंद्र, सैयद अहमद ख़ान, सैयद इमदाद अली, महेंद्र लाल सरकार आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

---

[6] ज्ञान प्रकाश (2000) : 6.

[7] इस समिति के अन्य सदस्य थे : आर.एम. मैकडॉनल्ड, नारायण बी. दाण्डेकर, आर. ग्रिफ़िथ, आर.जी. ऑक्सनहैम, जी.डब्ल्यू. लेटनर, क्रिस्टोदास पाल. इनके अलावा सी.एच. टॉनी और ई. लेथब्रिज इस समिति के सचिव थे.

[8] देखें, *रिपोर्ट ऑफ़ द कमेटी एपॉइंटेड टु इग्जामिन द टेक्स्टबुक्स इन यूज़ इन इंडियन स्कूल्स,* (1878); साथ ही देखें, बी.एस. गोयल एवं जे.डी. शर्मा (1987) : 228-251.

[9] दीपक कुमार (2006) : 2.

[10] प्रतीक चक्रवर्ती (2004) : 1.

जहाँ बंगाल में 1838 में स्थापित सोसाइटी फ़ॉर द एक्वीज़िशन ऑफ़ जनरल नॉलेज ने वैज्ञानिक विषयों पर व्याख्यान आयोजित कराए। वहीं *तत्वबोधिनी* पत्रिका के सम्पादक अक्षय कुमार दत्त ने विज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु अभियान चलाया। पश्चिमी भारत में भी हरि केशवजी पठारे और बालगंगाधर शास्त्री जाम्भेकर ने विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में महती भूमिका निभायी। एल्फ़िंस्टन कॉलेज में गणित के शिक्षक रहे जाम्भेकर ने विज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु 1831 में *बॉम्बे दर्पण* नामक पत्रिका छापनी शुरू की और नेटिव एजुकेशन सोसाइटी की भी स्थापना की। सैयद अहमद ख़ान ने अलीगढ़ साइंटिफ़िक सोसाइटी की स्थापना की, जिसने उर्दू में वैज्ञानिक साहित्य के अनुवाद में उल्लेखनीय योगदान दिया। इसी तरह सैयद इमदाद अली ने 1868 में बिहार साइंटिफ़िक सोसाइटी की स्थापना की और *अख़बार-उल-अखयार* नामक पत्रिका भी प्रकाशित की। बिहार साइंटिफ़िक सोसाइटी ने हिंदी और उर्दू दोनों ही भाषाओं में वैज्ञानिक पुस्तकों के अनुवाद को बढ़ावा देने में योगदान दिया।[11] वहीं 1876 में महेंद्र लाल सरकार ने इंडियन एसोसिएशन फ़ॉर कल्टीवेशन ऑफ़ साइंस की स्थापना की और साथ ही चिकित्सा से जुड़ी महत्त्वपूर्ण पत्रिका *कलकत्ता जर्नल ऑफ़ मेडिसिन* का प्रकाशन भी शुरू किया। फ़ादर यूजीन लैफों के साथ मिलकर महेंद्र लाल सरकार ने विज्ञान को लोकप्रिय बनाने हेतु व्याख्यानमालाएँ और विज्ञान प्रदर्शनियाँ भी आयोजित कीं।[12]

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में ब्रिटिश भारत में विज्ञान, तकनीकी शिक्षा और औद्योगीकरण के विकास और उससे जुड़ी बहसों पर विचार करते हुए इतिहासकर एस. इरफ़ान हबीब तीन उल्लेखनीय बातों की ओर हमारा ध्यान खींचते हैं। पहला, इन बहसों में निहित आधुनिक पश्चिमी विज्ञान की नैतिक आलोचना का भाव। दूसरा, शिक्षण की विधा में होने वाली प्रगति और उसके साथ-साथ ज्ञान की पारम्परिक प्रणाली को व्यवस्थित करने का प्रयास। तीसरा, सामाजिक बदलाव लाने में आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी के महत्त्व को स्वीकारना, पर एक वैकल्पिक भारतीय मॉडल के पक्ष में पश्चिमी मॉडल को नकारने की प्रवृत्ति।[13]

इसी संदर्भ में, इतिहासकार ज्ञान प्रकाश लिखते हैं कि आधुनिक भारत का उद्भव और अस्तित्व दोनों ही अविभाज्य रूप से विज्ञान के प्राधिकार (अथॉरिटी) और उसके प्रकार्य से जुड़े हुए हैं। विज्ञान के इस सांस्कृतिक प्राधिकार की शुरुआत उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में भारत जैसे उपनिवेशों को सभ्य बनाने के ब्रिटिश मिशन से होती है। इसके अंतर्गत अनुभव सिद्ध विज्ञान को पूर्वाग्रहरहित सार्वभौम ज्ञान के रूप में प्रस्तुत किया गया और वह प्रगति और तार्किकता का प्रतीक बनकर उभरा। इतिहासकार ज्ञान प्रकाश के अनुसार, इसका प्रभाव यह हुआ कि शिक्षित भारतीयों ने देशज वैज्ञानिक परम्पराओं को पश्चिमी विज्ञान के अनुरूप बनाने के प्रयास शुरू किये। इस प्रक्रिया में, पश्चिमी विज्ञान और हिंदू विज्ञान की समरूपता और साम्य को रेखांकित किये जाने के साथ ही दोनों की भिन्नता पर भी बल दिया गया। साथ ही, आधुनिक वैज्ञानिक धारणाओं और तकनीकी शब्दावली का इस्तेमाल भी धड़ल्ले से किया गया। इसका नतीजा यह निकला कि राजनीति और धर्म, विज्ञान और राज्य से जुड़े हुए विमर्श परस्पर अंतर्भुक्त हो गये।[14]

हिंदी में वैज्ञानिक लेखन : आरम्भिक प्रयास

हिंदी में विज्ञान संबंधी लेखन के संदर्भ में ओंकार भट्ट और राजा शिवप्रसाद के योगदान की चर्चा पहले ही की जा चुकी है। इनके अलावा उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में बालकृष्ण शास्त्री खण्डकर

[11] एस. इरफ़ान हबीब (1991), दीपक कुमार (सं.); साथ ही देखें, दीपक कुमार (2006).

[12] प्रतीक चक्रवर्ती (2001) : 245-274.

[13] एस. इरफ़ान हबीब (1995), रॉय मैकल्योड व दीपक कुमार (सं.) : 236.

[14] ज्ञान प्रकाश (2000) : 3-7.

और मुंशी अम्बिका प्रसाद सरीखे लेखकों ने विज्ञान की वे पाठ्य-पुस्तकें लिखीं, जिन्हें पश्चिमोत्तर प्रांत की सरकार ने विद्यालय स्तर पर बढ़ावा दिया। अम्बिका प्रसाद ने 1884 में लिखी गयी अपनी किताब *पहिला जुगराफ़िया* में पृथ्वी और उसके भौतिक भूगोल, उसके महाद्वीपों और ख़ासकर भारत की भौगोलिक संरचना के बारे में विस्तारपूर्वक लिखा।[15] नौ छोटे-छोटे अध्यायों में बँटी हुई इस किताब में निम्न विषयों का विवरण दिया गया था : पृथ्वी का भौगोलिक परिचय, उसकी भू-आकृति और विस्तार का वर्णन, पृथ्वी की गतियों का विवरण, महाद्वीपों और महासागरों का वर्णन, महाद्वीपों का वर्णन करते हुए उनके भूगोल और मानव-समुदायों का संक्षिप्त परिचय।[16] भूगोल से संबंधित अपनी किताब *खगोल विद्या* में बालकृष्ण शास्त्री खण्डकर ने टॉलमी, पाइथागोरस और कॉपरनिकस के खगोल संबंधी विचारों की चर्चा करते हुए सौरमण्डल, ग्रहों के अपनी कक्षा में घूमने, सूर्य और चंद्र ग्रहण, तारों और आकाशगंगा का परिचय दिया।[17] 1860 में इसी विषय से जुड़ी हुई एक और किताब उन्होंने लिखी जिसका शीर्षक था, *भूगोल विद्या*।[18]

इनमें से अधिकांश किताबें इलाहाबाद स्थित सरकारी प्रेस (गवर्नमेंट प्रेस) द्वारा प्रकाशित की गयी थीं और इनकी प्रतियाँ भी काफ़ी मात्रा में छपती थीं। मसलन, 1860 में बालकृष्ण खण्डकर की किताब *खगोल विद्या* का दूसरा संस्करण छपा तो उसकी दस हज़ार प्रतियाँ छापी गयीं। सरकारी प्रेस के अलावा ये किताबें लखनऊ स्थित नवल किशोर प्रेस द्वारा भी छापी गयीं, जिसने उन्नीसवीं सदी में और आगे भी शिक्षा विभाग द्वारा अनुमोदित किताबों को छापने में अग्रणी भूमिका निभाई थी।[19]

भारतेंदु हरिश्चंद्र सरीखे साहित्यकारों ने भी हिंदी के लेखकों को वैज्ञानिक विषयों पर हिंदी में लेख लिखने के लिए प्रोत्साहन दिया। ख़ुद भारतेंदु ने अपनी पत्रिका *हरिश्चंद्र चंद्रिका* में वैज्ञानिक पुस्तकों की समीक्षाएँ प्रकाशित कीं।[20] इसी तरह बालकृष्ण भट्ट और महावीर प्रसाद द्विवेदी, जो क्रमशः *हिंदी प्रदीप* और *सरस्वती* के सम्पादक थे, ने भी अपनी पत्रिकाओं में वैज्ञानिक विषयों पर लेख नियमित तौर पर प्रकाशित किये। इन दोनों ने स्वयं भी विज्ञान संबंधी लेख इन पत्रिकाओं में लिखे। बालकृष्ण भट्ट ने वायु, प्रकाश, पदार्थवाद, विकिरण, वायुमण्डल सरीखे विषयों पर *हिंदी प्रदीप* में लेख लिखे।[21] उनके कुछ लेख वैज्ञानिक प्रयोगों के बारे में भी थे, जिसमें वे इन प्रयोगों का वर्णन करते हुए अपने पाठकों से इन प्रयोगों को आज़माने का आग्रह करते थे।[22] इसी तरह महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भी *सरस्वती* में विज्ञान से जुड़े विषयों पर, मसलन सौरमण्डल, धूमकेतु व उल्का पिण्ड, पृथ्वी, मानव शरीर, पशु-पक्षियों पर अनेक लेख लिखे।[23] ये लेख आम पाठकों को समझ में आ सकने वाली बिल्कुल सरल भाषा में लिखे गये थे और भौतिकी, खगोल विज्ञान, भूगोल, रसायन, और

---

[15] यह पुस्तक वैसे तो मुंशी दुर्गा प्रसाद द्वारा उर्दू में लिखी गयी पुस्तक का अनुवाद थी, पर हिंदी में अनुवाद करते हुए अम्बिका प्रसाद ने इस पुस्तक का काफ़ी विस्तार किया था और इसमें कई अध्याय भी जोड़ दिये थे.

[16] अम्बिका प्रसाद (1884).

[17] बालकृष्ण शास्त्री खण्डकर (1860 क).

[18] बालकृष्ण शास्त्री खण्डकर (1860 ख).

[19] नवल किशोर प्रेस की प्रकाशन संबंधी गतिविधियों के बेहतरीन इतिहास के लिए देखें, उलराइक स्टार्क (2008).

[20] भारतेंदु के साहित्यिक जीवन और पत्रकारिता में उनके योगदान के विश्लेषण हेतु देखें, वसुधा डालमिया (1997).

[21] बालकृष्ण भट्ट, वायु, *हिंदी प्रदीप,* नवम्बर 1877; पदार्थवाद, *हिंदी प्रदीप,* दिसम्बर 1877; प्रकाश, *हिंदी प्रदीप,* जुलाई 1880; विकिरण, *हिंदी प्रदीप,* अगस्त, 1887; भूगर्भ निरूपण, *हिंदी प्रदीप,* अप्रैल 1889; वायुमण्डल, *हिंदी प्रदीप,* सितम्बर 1889; वनस्पति विज्ञान, *हिंदी प्रदीप,* नवम्बर 1906.

[22] देखें, बालकृष्ण भट्ट, लकड़ी का आग्नेयत्व कम कर देने की युक्ति, *हिंदी प्रदीप,* नवम्बर 1885; सिल्ली बनाने की युक्ति, *हिंदी प्रदीप,* नवम्बर 1885; शीशे या चीनी के बर्तनों पर क़लई करने की युक्ति, *हिंदी प्रदीप,* जनवरी 1886; कुल्फ़ी जमाने की युक्ति, *हिंदी प्रदीप,* जून 1888.

[23] महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा विज्ञान पर लिखे गये इन लेखों के संकलन के लिए देखें, *महावीर प्रसाद द्विवेदी रचनावली,* खण्ड 9, (1995); साथ ही देखें, रामविलास शर्मा (1977).

गणित आदि से जुड़ी बुनियादी धारणाओं की व्याख्या करते थे। भले ही हिंदी में वैज्ञानिक विषयों पर लिखने वाले महावीर प्रसाद द्विवेदी और बालकृष्ण भट्ट सरीखे ये विद्वान ख़ुद वैज्ञानिक न रहे हों और न ही उन्होंने विज्ञान में उच्च शिक्षा प्राप्त की थी, पर उनके इन लेखों ने विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में अहम भूमिका निभायी। हिंदी के इन लेखकों और पत्रिकाओं की तरह ही हिंदी के भाषाई संगठनों, मसलन काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने भी विज्ञान के प्रचार-प्रसार और हिंदी में विज्ञान से जुड़ी पारिभाषिक शब्दावली तैयार करने में उल्लेखनीय योगदान दिया। इस स्थिति में सबसे अहम बदलाव आया विज्ञान परिषद की स्थापना के बाद।

'उस ब्रह्म-बीज विज्ञान का सब थल सुखद प्रकाश हो' : विज्ञान परिषद (1913) और उसका मुखपत्र *विज्ञान*

बीसवीं सदी के शुरुआती वर्षों में हिंदी में विज्ञान के प्रचार-प्रसार में तब तेज़ी आयी, जब 1913 में इलाहाबाद के म्योर सेंट्रल कॉलेज के चार शिक्षकों ने विज्ञान और वैज्ञानिक साहित्य के प्रचार-प्रसार हेतु विज्ञान परिषद नामक संस्था की स्थापना की। ये चार शिक्षक थे : डॉ. गंगानाथ झा, हमीदुद्दीन, रामदास गौड़ और सालिगराम भार्गव। ये चारों क्रमश: संस्कृत, अरबी, रसायन और भौतिकी के शिक्षक थे। 14 मार्च, 1913 को इन चारों शिक्षकों ने विज्ञान को आम लोगों के बीच लोकप्रिय बनाने हेतु विज्ञान परिषद की नींव रखी। परिषद के दो मूल उद्देश्य थे : पहला, भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य का विकास; दूसरा, देश भर में वैज्ञानिक पद्धति का प्रचार-प्रसार। स्थापना के दो वर्ष बाद ही विज्ञान परिषद ने अप्रैल 1915 से हिंदी में एक मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया। जिसका नाम *विज्ञान* था। *विज्ञान* के पहले अंक के सम्पादक थे श्रीधर पाठक और लाला सीताराम। इस पहले अंक में रामदास गौड़, गोपालस्वरूप भार्गव, रघुनाथ चिंतामणि चतुर्वेदी, महावीरप्रसाद श्रीवास्तव, प्रेमवल्लभ जोशी, दक्षिणारंजन भट्टाचार्य, लाल पार्वतीनंदन, मोहनलाल जौहरी और गोमती प्रसाद अग्निहोत्री के लेख शामिल थे।[24] पहले अंक में जिन विषयों पर लेख थे, वे हैं : वैज्ञानिक शिक्षा का महत्त्व, कोयले का इतिहास, भार और मापन की विधियाँ, बिजली का इतिहास, कृषि, सिंचाई और नहर, पनडुब्बी आदि। इस अंक में संकर्षण और विश्वकर्मा के छद्मनाम से भी दो लेख शामिल थे।

तैतिरीय उपनिषद के इस सूक्त को विज्ञान के आवरण पृष्ठ पर आदर्श वाक्य के रूप में प्रकाशित किया गया :

> विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात। विज्ञानार्दध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
> विज्ञानेन जातानि जीवंति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसविशन्तीति। (*तैतिरीय उपनिषद* 3.5)

इसी के साथ आवरण पृष्ठ पर श्रीधर पाठक द्वारा रचित विज्ञान को समर्पित मंगलाचरण भी छापा गया :

> सूर्य, अग्नि, जल, व्योम, वायु में जिसका बल है
> संचालक सब का परंतु जो स्वयं अचल है
> उस अटल तत्व के ज्ञान से माया-पटल विनाश हो
> जो सर्वत्र सुविज्ञों का जिज्ञासा-स्थल है
> जगत दृश्य जिसकी केवल माया का छल है
> उस ब्रह्म-बीज विज्ञान का सबथल सुखद प्रकाश हो ।

---

[24] *विज्ञान (*प्रयाग की *विज्ञान परिषद* का मुखपत्र*)*, भाग I, सं. 1, अप्रैल (1915).

सभा की वैज्ञानिक शब्दकोश से जुड़ी समिति ने वैज्ञानिक शब्दावली तैयार करने हेतु ये नियम स्वीकृत किये थे : हिंदी में प्रचलित आम शब्दों को वरीयता देना, यदि हिंदी में समानार्थी शब्द न हों तो ऐसी स्थिति में अन्य भारतीय भाषाओं जैसे मराठी, गुजराती, बांग्ला, उर्दू में प्रचलित शब्दों को अपनाने पर विचार करना, ऐसा न हो पाने की स्थिति में (1) संस्कृत में प्रचलित शब्दावली का इस्तेमाल, (2) अंग्रेज़ी शब्दों का यथावत प्रयोग, (3) संस्कृत से पारिभाषिक शब्दों का निर्माण।

विज्ञान के पहले अंक में विज्ञान परिषद की पिछले दो साल (1913–15) की गतिविधियों का विवरण भी दिया गया था। इसमें बताया गया कि विज्ञान परिषद आरम्भिक स्कूली कक्षाओं की विज्ञान की पाठ्यपुस्तकें हिंदी में तैयार कर रही है। परिषद की कार्यकारिणी समिति ने छह विभाग भी बनाए थे, जिनका काम वैज्ञानिक विषयों की किताबें तैयार करने के साथ-साथ हिंदी में वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दों का एक शब्दकोश भी तैयार करना था। इस वैज्ञानिक शब्दकोश के अंश धारावाहिक रूप से हिंदी साहित्य सम्मेलन की पत्रिका *सम्मेलन पत्रिका* और बाद में *विज्ञान* में प्रकाशित भी हुए। विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिए परिषद ने इलाहाबाद और सतना में व्याख्यान भी आयोजित कराए। अप्रैल 1915 में *विज्ञान* के पहले अंक का प्रकाशन होने तक परिषद ऐसे उन्नीस व्याख्यान आयोजित करा चुका था, जिनमें से पंद्रह इलाहाबाद में और चार सतना में आयोजित किये गये थे। इन व्याख्यानों में विशेषज्ञ वक्ता दर्शकों के सामने वैज्ञानिक प्रयोग भी करके दिखाते थे।[25]

विज्ञान के पहले अंक में पाठकों से इस पत्रिका की सदस्यता लेने के साथ-साथ विज्ञान परिषद को आर्थिक सहयोग देने का भी आग्रह किया गया, जिससे परिषद की गतिविधियों का समुचित ढंग से संचालन सम्भव हो सके। 1915 तक विज्ञान परिषद के सदस्यों की संख्या लगभग दो सौ पचास हो चुकी थी। परिषद की भावी गतिविधियों का एक संक्षिप्त विवरण भी *विज्ञान* के इस अंक में दिया गया था। ये गतिविधियाँ थीं : वैज्ञानिक विषयों की किताबों का प्रकाशन, विज्ञान को लोकप्रिय बनाने हेतु उत्तर भारत में जगह-जगह पर व्याख्यान आयोजित कराना, हिंदीभाषी क्षेत्रों में विज्ञान परिषद की और भी शाखाएँ स्थापित करना और प्रयोगशालाएँ खोलना।[26]

हिंदी संसार ने *विज्ञान* के प्रकाशन का खुलकर स्वागत किया। *सरस्वती* के सम्पादक महावीर प्रसाद द्विवेदी ने विज्ञान में छपे लेखों को सराहते हुए *सरस्वती* के जून 1915 के अंक में पाठकों से *विज्ञान* को पढ़ने का भी अनुरोध किया और लिखा :

> *विज्ञान* के पहिले अंक में *सरस्वती* के आकार के 48 पृष्ठ हैं, छपाई सफ़ाई उत्तम है, लेख सब के सब विज्ञान विषय के हैं। वे बड़े-बड़े पदवीधरों के लिखे हुए हैं। सब मिलाकर 12 लेख और कई नोट्स हैं। सब अच्छे हैं भाषा भी अच्छी है। ऐसा सुंदर मासिक पत्र सभी के लेने योग्य है।[27]

इलाहाबाद से छपने वाले अंग्रेज़ी दैनिक द *लीडर* ने लिखा :

> विज्ञान परिषद अपना काम उत्साहपूर्वक कर रही है। इसने अब एक मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी शुरू किया है, जिसका नाम है *विज्ञान*। इसके पहले दो अंकों में विज्ञान से संबंधित अनेक महत्त्वपूर्ण लेख प्रकाशित हुए हैं, जो इलाहाबाद विश्वविद्यालय के नामचीन विद्वानों और विज्ञान के छात्रों द्वारा लिखे गये हैं। इनमें वैज्ञानिक नियमों और परिघटनाओं

---

[25] परिषद क्या कर रही है ?, *विज्ञान*, भाग-I, सं. 1, अप्रैल 1915 : 50.

[26] वही.

[27] *विज्ञान*, भाग-I, सं. 4, जुलाई 1915, में उद्धृत.
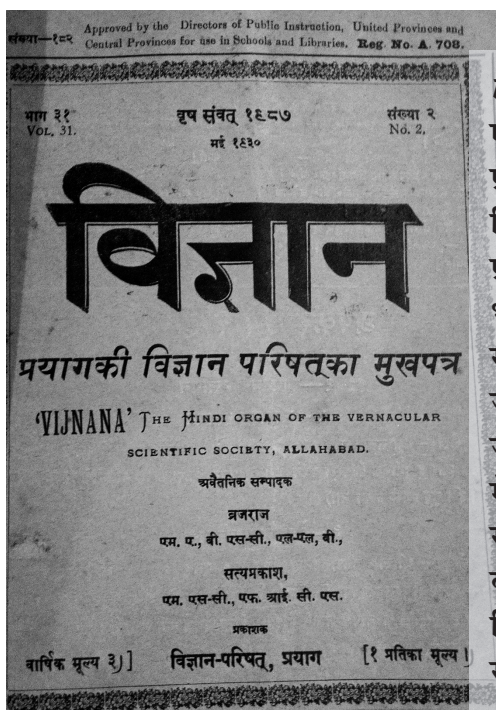
संख्या—१८२ Approved by the Directors of Public Instruction, United Provinces and Central Provinces for use in Schools and Libraries. Reg. No. A. 708.

भाग ३१ VOL. 31. | वृष संवत् १९८७ मई १९३० | संख्या २ No. 2.

विज्ञान

प्रयागकी विज्ञान परिषत्‌का मुखपत्र

'VIJNANA' THE HINDI ORGAN OF THE VERNACULAR SCIENTIFIC SOCIETY, ALLAHABAD.

अवैतनिक सम्पादक

ब्रजराज
एम. ए., बी. एस-सी., एल-एल, बी.,

सत्यप्रकाश,
एम. एस-सी., एफ. आई. सी. एस.

प्रकाशक

वार्षिक मूल्य ३)] विज्ञान-परिषत्, प्रयाग [१ प्रतिका मूल्य ।

***विज्ञान* के दूसरे ही अंक में जगदीश सहाय माथुर ने एक लेख लिखा, जिसमें उन्होंने एक संशोधित और प्रामाणिक हिंदी वैज्ञानिक कोश की ज़रूरत पर बल दिया। लेख में उन्होंने नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हिंदी वैज्ञानिक शब्दकोश की कई ख़ाामियाँ भी गिनायीं। उनके अनुसार, सभा ने हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य का विकास होने से पहले ही उन विषयों से जुड़ी पारिभाषिक शब्दावली प्रकाशित करने की जल्दबाज़ी दिखायी। यही वजह थी कि इस शब्दकोश में वह प्रामाणिकता न आ सकी, जो वैज्ञानिक साहित्य के विकास के साथ-साथ विकसित होने वाली शब्दावली में होती है। इसका नतीजा यह हुआ कि सभा के वैज्ञानिक शब्दकोश को अपेक्षित स्वीकार्यता नहीं मिल सकी।**

> को बेहद सरल ढंग से समझाया गया है और जहाँ ज़रूरत समझी गयी है, वहाँ चित्रों की मदद भी ली गयी है। हमें पूरी उम्मीद है कि यह पत्रिका हिंदी के पाठकों में वैज्ञानिक ज्ञान के प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय योगदान देगी।[28]

विज्ञान के हर अंक लगभग पचास पृष्ठ के होते थे और कई वर्गों में बँटे होते थे। मसलन ये वर्ग थे : साधारण, रसायन, यंत्रशास्त्र, कृषि, शिल्प, भौतिक विज्ञान, जीव विज्ञान, विकास, विद्युत विद्या, धातु विद्या, स्फुट आदि।

हिंदी में वैज्ञानिक शब्दावली का विकास और *विज्ञान*

हिंदी में वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण की विधिवत् शुरुआत तब हुई, जब 1893 में स्थापित काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने अपने स्थापना के पाँच वर्ष बाद हिंदी वैज्ञानिक शब्दकोश (*हिंदी साइंटिफ़िक ग्लॉसरी*) तैयार करने का ज़िम्मा सँभाला। इस शब्दकोश में भूगोल, खगोलविज्ञान, गणित, अर्थशास्त्र, भौतिकी, रसायन और दर्शन जैसे विषयों के पारिभाषिक शब्द के समांतर हिंदी शब्द उपलब्ध कराए गये। 1906 में सभा द्वारा हिंदी वैज्ञानिक शब्दकोश का प्रकाशन किया गया, जिसका सम्पादन हिंदी के प्रसिद्ध विद्वान और आलोचक श्यामसुंदर दास ने किया था। माधवराव सप्रे, महावीर प्रसाद द्विवेदी, सुधाकर द्विवेदी और ठाकुर प्रसाद सरीखे विद्वानों ने यह शब्दकोश तैयार करने में सहायता प्रदान की। 1901-02 के दौरान ही शब्दकोश का आरम्भिक प्रारूप तैयार हुआ, जिसमें विषयानुसार निम्न विद्वानों ने योगदान दिया : श्यामसुंदर दास (भूगोल), सुधाकर द्विवेदी (खगोल विज्ञान और गणित), महावीर प्रसाद द्विवेदी (दर्शन), माधवराव सप्रे (राजनीतिक अर्थव्यवस्था) और ठाकुर प्रसाद (भौतिकी)। इन

---

[28] *द लीडर*, अप्रैल 25, 1915, *विज्ञान*, भाग-I, सं. 4, जुलाई 1915, में उद्धृत (अंग्रेज़ी से अनुवाद मेरा).

विद्वानों द्वारा तैयार किये गये शब्दकोश के आरम्भिक प्रारूप में सुधार और संशोधन का काम एक पुनरीक्षण समिति द्वारा किया गया। जिसके सदस्य थे : ए.सी. सान्याल, भगवान दास, भगवती सहाय, दुर्गा प्रसाद, गोविंद दास, खुशी राम, एन.बी. रानाडे, पण्डित रामावतार शर्मा, टी.के. गज्जर, वनमाली चक्रवर्ती और पण्डित विनायक राव।[29] सभा ने इस शब्दकोश को तैयार करने में बंगाल, पंजाब, युक्त प्रांत और मध्य प्रांत के शिक्षा विभागों से भी मदद माँगी और इन विभागों ने सभा को अपेक्षित आर्थिक सहयोग भी दिया। सितम्बर 1903 में हुई एक बैठक में सभा की वैज्ञानिक शब्दकोश से जुड़ी समिति ने वैज्ञानिक शब्दावली तैयार करने हेतु ये नियम स्वीकृत किये थे : हिंदी में प्रचलित आम शब्दों को वरीयता देना, यदि हिंदी में समानार्थी शब्द न हों तो ऐसी स्थिति में अन्य भारतीय भाषाओं जैसे मराठी, गुजराती, बांग्ला, उर्दू में प्रचलित शब्दों को अपनाने पर विचार करना, ऐसा न हो पाने की स्थिति में (1) संस्कृत में प्रचलित शब्दावली का इस्तेमाल, (2) अंग्रेज़ी शब्दों का यथावत प्रयोग, और (3) संस्कृत से पारिभाषिक शब्दों का निर्माण।[30]

नागरी प्रचारिणी सभा ने 1930 में इन वैज्ञानिक शब्दकोशों में संशोधन के लिए एक समिति बनाई, जिसके सुझावों के अनुरूप शब्दकोशों में सुधार किये गये और अगले ही वर्ष शब्दकोशों के संशोधित संस्करण प्रकाशित भी किये गये। सभा की तरह ही इलाहाबाद की विज्ञान परिषद भी इस दिशा में प्रयासरत थी। *विज्ञान* के दूसरे ही अंक में जगदीश सहाय माथुर ने एक लेख लिखा, जिसमें उन्होंने एक संशोधित और प्रामाणिक हिंदी वैज्ञानिक कोश की ज़रूरत पर बल दिया। लेख में उन्होंने नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हिंदी वैज्ञानिक शब्दकोश की कई ख़ामियाँ भी गिनायीं। उनके अनुसार, सभा ने हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य का विकास होने से पहले ही उन विषयों से जुड़ी पारिभाषिक शब्दावली प्रकाशित करने की जल्दबाज़ी दिखायी। यही वजह थी कि इस शब्दकोश में वह प्रामाणिकता न आ सकी, जो वैज्ञानिक साहित्य के विकास के साथ-साथ विकसित होने वाली शब्दावली में होती है। इसका नतीजा यह हुआ कि सभा के वैज्ञानिक शब्दकोश को अपेक्षित स्वीकार्यता नहीं मिल सकी।[31] हिंदी में वैज्ञानिक परिभाषाओं के निर्माण पर लिखी गयी अपनी इस लेखमाला की पहली कड़ी में जगदीश सहाय माथुर ने इस बाबत तीन विकल्प सुझाए थे। पहला, संस्कृत की सहायता से हरेक वैज्ञानिक और तकनीकी शब्द के लिए हिंदी में नये शब्द का निर्माण; दूसरा अंग्रेज़ी के शब्दों को यथावत अपना लेना; तीसरा, अंग्रेज़ी के शब्दों को हिंदी में अपनाते हुए उनका स्वरूप परिवर्तन, मसलन नाइट्रोजन के लिए नेत्रजन और ब्रोमीन के लिए ब्रम का इस्तेमाल। माथुर ने तीसरे विकल्प को नकारते हुए पहले और दूसरे विकल्प को तरजीह दी। उल्लेखनीय है कि माथुर अंग्रेज़ी के उन शब्दों को अपनाने के पक्षधर थे, जो हिंदी में पहले से ही प्रचलन में आ चुके थे और जिन्हें व्यापक स्वीकार्यता मिल चुकी थी।[32]

जगदीश सहाय माथुर ने अपने इस लेख में भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य के प्रचार के आरम्भिक प्रयासों की भी चर्चा की थी। इस क्रम में, उन्होंने त्रिभुवनदास कल्याणदास गज्जर (1863–1920) का भी उल्लेख किया, जिन्होंने मराठी और गुजराती में वैज्ञानिक पुस्तकों को तैयार करने का प्रयास किया था।[33] महाराजा सयाजी राव गायकवाड़ ने 1888 में बड़ौदा स्थित कला भवन को वैज्ञानिक

---

[29] *हिंदी वैज्ञानिक शब्दकोश* को तैयार करने व उसके प्रकाशन से जुड़े ब्योरे के लिए देखें, श्यामसुंदर दास (सं.) (1906) : प्राक्कथन.

[30] वही.

[31] जगदीश सहाय माथुर, *हिंदी और वैज्ञानिक परिभाषा* (दूसरा भाग), *विज्ञान,* भाग-I, सं. 3, जून 1915 : 99.

[32] जगदीश सहाय माथुर, *हिंदी और वैज्ञानिक परिभाषा* (पहला भाग), *विज्ञान,* भाग-I, सं. 2, मई 1915 : 51.

[33] त्रिभुवनदास गज्जर बड़ौदा कॉलेज में शिक्षक थे और भारत में औद्योगिक रसायन के प्रणेता माने जाते हैं. उन्होंने बड़ौदा में एलेम्बिक केमिकल वर्क्स और मुम्बई में टेक्नो-केमिकल लैबोरेट्री की स्थापना की थी. देखें, हरकिशन सिंह (2010) : 419–429.

और तकनीकी विषयों पर भारतीय भाषाओं में किताबें तैयार करने के लिए पचास हज़ार रुपये की राशि दी थी। उस समय कला भवन, जिसका उद्देश्य छात्रों को औद्योगिक प्रशिक्षण देना था, त्रिभुवनदास गज्जर के ही नेतृत्व में काम कर रहा था।[34] कला भवन ने मराठी और गुजराती दोनों भाषाओं में वैज्ञानिक पुस्तकों का प्रकाशन शुरू किया। लेकिन पाँच वर्षों में कला भवन पाँच किताबें ही छाप सका। 1899 में त्रिभुवनदास गज्जर बड़ौदा से बम्बई चले जाने के बाद यह महत्त्वाकांक्षी परियोजना अधूरी रह गयी। बंगीय साहित्य परिषद ने भी बांग्ला में वैज्ञानिक साहित्य को प्रोत्साहन देने हेतु एक ऐसी पहल की थी, जो कुछ समय बाद बंद हो गयी।[35] बंगीय साहित्य परिषद से पूर्व प्रसिद्ध भारतविद और एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ बंगाल के पहले भारतीय अध्यक्ष राजेंद्र लाल मित्र भी इस दिशा में प्रयास कर चुके थे। 1877 में ही राजेंद्र लाल मित्र ने इस विषय से संबंधित एक पुस्तक लिखी, जिसका शीर्षक था : *अ स्कीम फ़ॉर द रेंडरिंग ऑफ़ द यूरोपियन साइंटिफ़िक टर्म्स इन इंडिया*। इस पुस्तक में राजेंद्र लाल मित्र ने वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण संबंधी अपने विचारों को बताते हुए अनुवाद की प्रक्रिया में भारतीय भाषाओं की स्वायत्तता पर बल दिया था।[36] राजेंद्र लाल मित्र की इस पुस्तक से भी दो दशक पहले जे.आर. बैलंटाइन ने अपनी पुस्तक *अ डिस्कोर्स ऑन ट्रांसलेशन* (1855) में भारतीय संदर्भ में वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण में संस्कृत के प्रयोग पर ज़ोर दिया था। बैलंटाइन ने ख़ुद कुछ ऐसे शब्द गढ़े भी थे, मसलन ब्लैक रॉक के लिए कृष्ण प्रस्तर और पोटेशियम आयोडाइड के लिए लघुतम का अरुणज जैसे शब्द।[37]

विज्ञान को पढ़ते हुए

मई, 1915 में *विज्ञान* का दूसरा अंक छपा, जिसमें सालिगराम वर्मा, मधुमंगल मिश्रा, गिरिजाकुमार घोष और राधामोहन गोकुल आदि के लेख शामिल थे। ये लेख जीवविज्ञान, कृषि, कीटविज्ञान, पनडुब्बियों और सौर इंजन आदि से संबंधित थे। *विज्ञान* के इस अंक में विज्ञान गल्प भी शामिल था, जोकि बाद के अंकों में एक स्थायी स्तम्भ के रूप में देखने को मिलने लगा।[38] आगे चलकर *विज्ञान* के अंकों में विज्ञान से जुड़े संस्कृत ग्रंथ, मसलन वराहमिहिर की *बृहत्संहिता* के हिंदी अनुवाद और उनकी टीकाएँ भी धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुईं। *विज्ञान* के तीसरे अंक में पण्डित बद्री नारायण मिश्रा का एक लेख छपा, जिसमें उन्होंने भारतीय खगोलविज्ञान के सिद्धांतों की तुलना यूरोपीय खगोलविज्ञान के सिद्धांतों से की थी।[39] यह लेख दरअसल उनकी मृत्यु के पश्चात् विज्ञान में प्रकाशित हुआ था। उनके बेटे मुरलीधर मिश्रा ने उनकी हस्तलिखित पुस्तक *खगोल दर्शन* विज्ञान परिषद को दी थी, जिसे *विज्ञान* में धारावाहिक रूप से प्रकाशित किया गया। *विज्ञान* के इसी अंक में भविष्य के समाजवादी नेता आचार्य नरेंद्र देव का भी एक लेख दुनिया भर की लिपियों के बारे में छपा था, जिसमें उन्होंने इन लिपियों का तुलनात्मक अध्ययन किया था।[40]

---

[34] कला भवन के आरम्भिक इतिहास और विज्ञान के क्षेत्र में उसके योगदान के लिए देखें, ध्रुव रैना और एस. इरफ़ान हबीब (1991) : 2619-2624.

[35] माथुर, हिंदी और वैज्ञानिक परिभाषा : 55-56.

[36] राजेंद्र लाल मित्र की वैज्ञानिक शब्दावली संबंधी योजना के विस्तृत विश्लेषण हेतु देखें, ज्ञान प्रकाश (2000) : 50-52.

[37] दीपक कुमार (2006) : 143.

[38] दा.वि. देवधर, मेरा आश्चर्यजनक स्वप्न, *विज्ञान*, भाग-I, सं. 3, जून 1915, 130-134 (यह गल्प-लेख चौथे अंक में भी जारी रहा).

[39] खगोल की मोटी-मोटी बातें भारतीय और यूरोपीय सिद्धांतों की परीक्षा, *विज्ञान*, भाग I, सं. 3, जून 1915, 134-138.

[40] नरेंद्र देव, संसार की लिपियों में गतिभेद, वही, 140-142.

विज्ञान में विविध विषयों पर छपने वाले ये लेख बहुधा संवाद की शैली में लिखे जाते थे, जिसमें दो या दो से अधिक लोगों को एक पूर्व-निश्चित विषय पर संवाद करते हुए दर्शाया जाता था। उदाहरण के लिए *विज्ञान* के तीसरे ही अंक में रघुवरप्रसाद द्विवेदी का एक लेख छपा, जो वातावरण में नाइट्रोजन और ऑक्सीजन की मौजूदगी के बारे में था। यह पूरा लेख ही एक शिक्षक (सोमेश्वर) और छात्र (रामेश्वर) के बीच संवाद के रूप में लिखा गया था। शिक्षक वातावरण में मौजूद गैसों के बारे में अपने छात्र को बताते हुए विज्ञान में प्रयोगों के महत्त्व को रेखांकित करता है और ज़ोर देकर कहता है कि विज्ञान में कपोल कल्पनाओं के लिए कोई जगह नहीं।[41]

जीवविज्ञान, वनस्पति और कृषि से संबंधित खण्डों में प्रकाशित लेखों में कीड़े-मकोड़ों, ख़ासकर फ़सलों को नुक़सान पहुँचाने वाले कीटों और उन पर नियंत्रण पाने के उपायों की चर्चा भी *विज्ञान* में विस्तारपूर्वक की जाती थी। *विज्ञान के* तीसरे अंक में हलकर्षण छद्मनाम से लिखे गये दो अलग-अलग लेखों में घुन और दीमक के बारे में जानकारी दी गयी। घुन से निजात पाने के लिए फ़सल को कार्बन डाईसल्फाइड के धुएँ से उपचारित करने, उसमें नैपथलीन पाउडर का इस्तेमाल करने या धूप दिखाने का सुझाव दिया गया था।[42]

विज्ञान के इन लेखों में आधुनिक विज्ञान के प्रति सिर्फ़ असीम लगाव ही नहीं, बल्कि उसे अचरज के साथ देखने और उसके आकर्षण से मुग्ध/सम्मोहित होने का भाव भी देखने को मिलता है।[43] मुग्धता का यह भाव विज्ञान के चौथे अंक के लिए श्रीधर पाठक द्वारा लिखे गये मंगलाचरण में बख़ूबी अभिव्यक्त होता है। इस मंगलाचरण में हिंदी के प्रसिद्ध कवि श्रीधर पाठक ने आधुनिक विज्ञान की तमाम उपलब्धियों को गिनाते हुए विज्ञान की खुलकर सराहना की है :

> रेल, तार, बेतार, एक्सरेरश्मि, रेडियम
> फ़ोटो, फ़ोनो, अनुवीक्षण, द्रुत-अनुलेखन-क्रम
> जल-थल-नभ-पथ सुलभ सरल सर्वत्र समागम
> मोटर बायस्कोप, यंत्र-समुदाय अनुपम
> यह जिसका अनुसंधान-फल अथवा आविष्कार है
> उस पश्चिमीय विज्ञान का स्वागत सौ सौ बार है।[44]

1916 में गोपालस्वरूप भार्गव ने *विज्ञान* के सम्पादक के रूप में लाला सीताराम और श्रीधर पाठक की जगह ली। उन्होंने 1916 से 1925 तक लगभग दस वर्षों की अवधि तक *विज्ञान* का सम्पादन किया। उनके पश्चात् अगले सात वर्षों तक ब्रजराज *विज्ञान* के सम्पादक रहे। 1933 में रामदास गौड़ ने *विज्ञान के* सम्पादन का कार्यभार सँभाला और 1937 में असामयिक मृत्यु तक वे इस पत्रिका के सम्पादक रहे। उनके बाद डॉ. गोरख प्रसाद (1937-1945), डॉ. संत प्रसाद (1945-1947), रामचरण मेहरोत्रा (1947-1953), और हीरालाल निगम ने (1953 से आगे) *विज्ञान* का सम्पादन किया। जब एक ओर इलाहाबाद में विज्ञान परिषद अपनी गतिविधियों में पूरी सक्रियता से लगा हुआ था, तभी इलाहाबाद की ही एक साहित्यिक संस्था हिंदी साहित्य सम्मेलन ने भी अपने वार्षिक अधिवेशनों में विज्ञान के विशेष सत्र आयोजित करने शुरू किये।

---

[41] रघुवरप्रसाद द्विवेदी, वायु के दो प्रधान गैस, वही, 113-116; संवाद शैली में लिखे गये ऐसे एक अन्य लेख का उदाहरण है, केशवचंद्र सिंह चौधरी एवं महावीर प्रसाद, वायु-मण्डल और उसका दबाव, *विज्ञान,* भाग I, सं. 4, जून 1915, 178-181.

[42] घुन, *विज्ञान,* भाग I, सं. 3, जून 1915, 120-121; दीमक, वही, 121-124; साथ ही देखें, खेती का प्राण और उसकी रक्षा, *विज्ञान,* भाग I, सं. 4, जुलाई 1915, 153-156.

[43] औपनिवेशिक भारत में आधुनिक विज्ञान के प्रति मुग्धता के भाव की इस प्रवृत्ति के ऐतिहासिक विवरण के लिए देखें, डेविड आर्नाल्ड (2013).

[44] मंगलाचरण, *विज्ञान,* भाग I, सं. 3, जून 1915, 145.
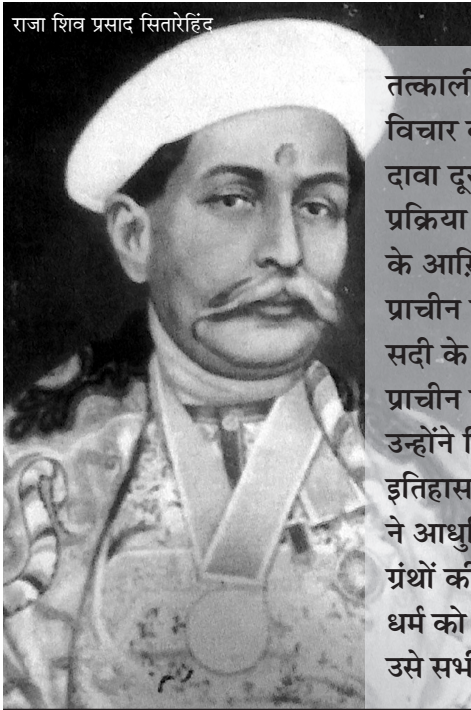
राजा शिव प्रसाद सितारेहिंद

तत्कालीन वैज्ञानिक समुदाय ने भी हर उस बात या विचार को विज्ञान नहीं माना, जिसके विज्ञान होने का दावा दूसरे लोग कर रहे थे। यह प्रवृत्ति उस ऐतिहासिक प्रक्रिया का नतीजा थी, जिसके अंतर्गत अठारहवीं सदी के आख़िरी दशकों में प्राच्यवादियों द्वारा शुरू किये गये प्राचीन हिंदू ग्रंथों के अध्ययन से प्रेरित होकर उन्नीसवीं सदी के हिंदू बुद्धिजीवियों ने यह घोषित किया कि उन प्राचीन ग्रंथों में वैज्ञानिक सत्य अंतर्निहित था और जिसे उन्होंने हिंदू विज्ञान की संज्ञा दी। इस संदर्भ में इतिहासकार ज्ञान प्रकाश लिखते हैं कि हिंदू बुद्धिजीवियों ने आधुनिक विज्ञान के प्राधिकार के आलोक में प्राचीन ग्रंथों की तार्किकता की पुनर्व्याख्या की। साथ ही, हिंदू धर्म को विज्ञानसंबंधी ज्ञान और व्यवहारों से युक्त बताते हुए उसे सभी भारतीयों की विरासत घोषित कर दिया।

हिंदी साहित्य सम्मेलन और विज्ञान परिषद

हिंदी साहित्य सम्मेलन का पहला अधिवेशन 1910 में काशी में मदन मोहन मालवीय की अध्यक्षता में हुआ था। इस अधिवेशन के बाद हिंदी साहित्य सम्मेलन का मुख्यालय इलाहाबाद में स्थानांतरित हो गया, जहाँ यह आज भी सक्रिय है। हिंदी साहित्य सम्मेलन ने अपने स्थापना वर्ष से ही देश के अलग-अलग भागों में वार्षिक अधिवेशन का आयोजन शुरू किया। 1932 में हिंदी साहित्य सम्मेलन ने अपने अधिवेशनों में विज्ञान के लिए एक समांतर सत्र चलाना भी शुरू किया, जिसे विज्ञान परिषद कहा जाता था। उल्लेखनीय है कि सम्मेलन द्वारा वार्षिक रूप से आयोजित होने यह विज्ञान परिषद, इलाहाबाद में ही 1913 में स्थापित विज्ञान परिषद से भिन्न है।[45] 1935 से सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशनों में इतिहास, दर्शन, राष्ट्रभाषा आदि की परिषदें भी आयोजित होने लगीं। सम्मेलन के विज्ञान परिषद का पहला अधिवेशन 1932 में झाँसी में आयोजित हुआ, जोकि सम्मेलन का बीसवाँ वार्षिक अधिवेशन भी था। विज्ञान परिषद का आख़िरी अधिवेशन 1950 में कोटा में आयोजित हुआ, जोकि सम्मेलन का अड़तीसवाँ वार्षिक अधिवेशन था। हीरालाल खन्ना, रामदास गौड़, डॉ. गोरख प्रसाद, फूलदेव सहाय वर्मा, डॉ. सत्यप्रकाश, महावीरप्रसाद श्रीवास्तव, रामनारायण मिश्र सरीखे विद्वान विज्ञान परिषद के सभापति रहे।

विज्ञान परिषद के सभापतियों के भाषणों में हमें बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के विकास की झलक तो मिलती ही है। साथ ही, कुछ और महत्त्वपूर्ण मुद्दों से भी हम वाक़िफ़ होते हैं। मसलन, हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य और तकनीकी शब्दावली के अभाव और इस

---

[45] यद्यपि सम्मेलन के इस वार्षिक विज्ञान परिषद के अधिकांश सभापति 1913 में स्थापित विज्ञान परिषद से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए थे. मसलन, रामदास गौड़, डॉ. गोरख प्रसाद, फूलदेव सहाय वर्मा, डॉ. सत्यप्रकाश और महावीरप्रसाद श्रीवास्तव. इनमें से डॉ. गोरख प्रसाद और डॉ. सत्यप्रकाश दो बार विज्ञान परिषद के सभापति रहे.

अभाव को भरने की दिशा में प्रयास; औद्योगिक प्रशिक्षण और तकनीकी शिक्षा की आवश्यकता; उच्चतर कक्षाओं में भी वैज्ञानिक विषयों के शिक्षण हेतु हिंदी का इस्तेमाल; समुचित उपकरणों के साथ देश भर में प्रयोगशालाओं की स्थापना, आदि।

1932 में आयोजित विज्ञान परिषद के पहले अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए हीरालाल खन्ना ने अपने भाषण में हिंदी में मौजूद वैज्ञानिक साहित्य का विवरण देते हुए उन विद्वानों का ख़ासतौर पर ज़िक्र किया, जिन्होंने हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के विकास में उल्लेखनीय योगदान दिया। मसलन, उन्होंने रामदास गौड़, गणितज्ञ डॉ. गणेश प्रसाद, सालिगराम भार्गव, ब्रजराज, गोपालस्वरूप भार्गव, डॉ. निहालकरण सेठी और महावीरप्रसाद श्रीवास्तव का उल्लेख किया। इस क्रम में, उन्होंने इलाहाबाद के विज्ञान परिषद और उसके मुखपत्र *विज्ञान* की भी सराहना की। हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य की कमी के बारे में बोलते हुए उन्होंने विद्वानों से इस अभाव को पूरा करने का आह्वान किया, ताकि आम लोगों में वैज्ञानिक विचारों का प्रचार-प्रसार सम्भव हो सके। अतीत में विज्ञान के क्षेत्र में भारतीयों की उपलब्धियों के बावजूद वर्तमान में विज्ञान के क्षेत्र में उनके पिछड़ेपन के बारे में बोलते हुए हीरालाल खन्ना ने भारतीयों द्वारा अपनी विद्वत्ता पर अनुचित घमण्ड और दुनिया में ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में हो रही तब्दीलियों से ख़ुद को अनभिज्ञ रखने की मूढ़ता को इसका कारण बताया।[46] उल्लेखनीय है कि आचार्य प्रफुल्ल चंद्र राय ने भी रसायनविज्ञान के इतिहास पर लिखी अपनी प्रसिद्ध किताब में भारत में वैज्ञानिक चिंतन के पतन में जाति-व्यवस्था को उत्तरदायी ठहराया था। उनके अनुसार जाति-व्यवस्था के चलते ही :

> हिंदुओं के एक बड़े बौद्धिक समुदाय ने ख़ुद को दस्तकारी, कला, शिल्प जैसे क्षेत्रों से अलग कर लिया। नतीजा यह हुआ कि वे प्राकृतिक परिघटनाओं के कार्य-कारण संबंधों को समझने में अक्षम हो गये। और इस तरह धीरे-धीरे जिज्ञासा का भाव लुप्त हो गया। यही वजह थी कि भारत में कोई बॉयल, देकार्त या न्यूटन पैदा न हो सका और वैज्ञानिक दुनिया के मानचित्र से कुछ समय तक हिंदुस्तान ग़ायब ही हो गया।[47]

हीरालाल खन्ना ने अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्नीसवीं सदी से लेकर 1931 तक हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के विकास का एक संक्षिप्त ब्यौरा दिया। इस क्रम में उन्होंने हिंदी में विज्ञान की पाठ्य-पुस्तकें लिखने वाले पण्डित मथुराप्रसाद मिश्र, त्रिकोणमिति पर किताब लिखने वाले लक्ष्मीशंकर मिश्र, बीजगणित की पुस्तक लिखने वाले बापूदेव शास्त्री, उच्चतर गणित से संबंधित चलन कलन और चल-राशि कलन सरीखी पुस्तकें लिखने वाले सुधाकर द्विवेदी, महेशचरण सिंह और डॉ. गोरख प्रसाद आदि का विशेष तौर पर उल्लेख किया।[48] साथ ही, उन्होंने हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के विकास में उल्लेखनीय योगदान देने के लिए विज्ञान परिषद, नागरी प्रचारिणी सभा, हिंदुस्तानी एकेडमी और गुरुकुल काँगड़ी की भी सराहना की। पर ये प्रयास नाकाफ़ी थे, इसलिए हीरालाल खन्ना ने वैज्ञानिक साहित्य के निर्माण व विज्ञान के प्रचार के लिए तीन बातों पर विशेष ज़ोर दिया : वैज्ञानिक पुस्तकों की भाषा; पारिभाषिक शब्दों का अभाव एवं उनसे जुड़ी अनिश्चय की स्थिति को दूर करने की ज़रूरत; और इस दिशा में कार्य करते हुए सहकारिता और सहयोग के भाव की आवश्यकता।[49]

हिंदी में विज्ञान से संबंधित पारिभाषिक शब्दों के निर्माण हेतु उन्होंने सर्वमान्यता के सिद्धान्त पर बल दिया। साथ ही जो शब्द रोज़मर्रा की बोलचाल का हिस्सा बन गये थे, उन शब्दों को यथावत

---

[46] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 28.

[47] पी. राय (सं.) (1956) : 240-241.

[48] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 29-30.

[49] वही : 30.
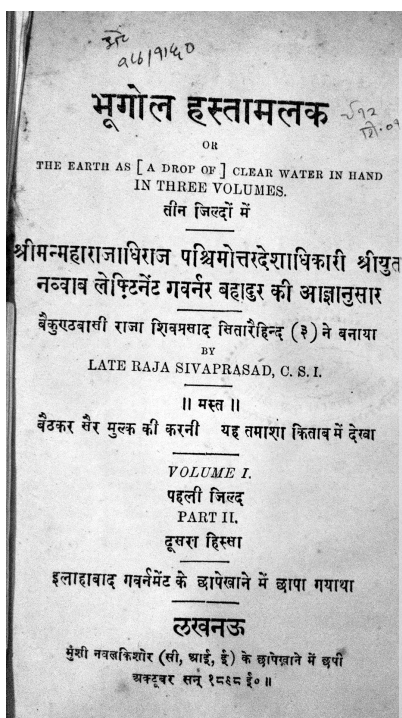
विज्ञान परिषद की अध्यक्षता करते हुए गोरख प्रसाद ने विज्ञान परिषद, हिंदी साहित्य सम्मेलन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा व हिंदुस्तानी एकेडमी से इस दिशा में पहल करने का अनुरोध किया। *एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका* की तर्ज़ पर गोरख प्रसाद ने हिंदी में एक विज्ञान विश्वकोश और हिंदी-अंग्रेज़ी का एक मानक शब्दकोश प्रकाशित करने का भी सुझाव दिया। उनका मानना था कि इससे हिंदी में वैज्ञानिक विषयों पर लिखने वाले विद्वानों का कार्य सुगम हो सकेगा। फूलदेव सहाय वर्मा की भाँति ही महावीरप्रसाद श्रीवास्तव ने भी विज्ञान परिषद के उदयपुर अधिवेशन (1945) की अध्यक्षता करते हुए हिंदी में वैज्ञानिक पुस्तकों की एक ग्रंथमाला प्रकाशित करने का सुझाव दिया।

व्यवहार में लाने की हिमायत की। इस संदर्भ में उन्होंने सत्यप्रकाश और निहालकरण सेठी के परस्पर विरोधी मतों को भी उद्धृत किया। सत्यप्रकाश जहाँ संस्कृत की संज्ञाओं और क्रियाओं के ज़रिये हिंदी में वैज्ञानिक शब्दों के निर्माण की बात कह रहे थे, वहीं निहालकरण सेठी अंतरराष्ट्रीय शब्दावली को हिंदी में यथावत अपनाने के हामी थे।[50]

रामदास गौड़ 1934 में दिल्ली में आयोजित हुई विज्ञान परिषद के दूसरे अधिवेशन के सभापति थे। रसायनविज्ञान के शिक्षक रामदास गौड़ ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय, बनारस हिंदू युनिवर्सिटी और गुरुकुल काँगड़ी समेत अनेक संस्थानों में अध्यापन कार्य किया था। वे इलाहाबाद की विज्ञान परिषद के संस्थापक-सदस्य थे और सालिगराम भार्गव व महावीरप्रसाद श्रीवास्तव के साथ उन्होंने विज्ञान परिषद द्वारा प्रकाशित की गयी *विज्ञान प्रवेशिका* का सम्पादन भी किया था।[51] साथ ही वे बिहार विद्यापीठ के पाठ्यक्रम के अनुरूप प्रकाशित हुई पाठ्यपुस्तकों के सम्पादक भी रहे।[52] 1936 में रामदास गौड़ ने कॉलेज के विद्यार्थियों और विज्ञान में दिलचस्पी रखने वाले आम पाठकों के लिए एक पुस्तक लिखी, जिसका शीर्षक था : *विज्ञानहस्तामलक अर्थात् सीधी-सादी भाषा में रोचक क्रम से अठारह विज्ञानों की कहानी*। हिंदुस्तानी एकेडमी द्वारा प्रकाशित यह किताब जे. आर्थर थॉमसन की किताब

---

[50] उल्लेखनीय है कि सत्यप्रकाश विज्ञान परिषद की पत्रिका *विज्ञान* के सम्पादक थे, जबकि निहालकरण सेठी काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हिंदी वैज्ञानिक शब्दकोश के संशोधित संस्करण के सम्पादक थे. देखें, निहालकरण सेठी (सं.) (1931).

[51] *विज्ञान प्रवेशिका* दो भागों में प्रकाशित हुई थी. देखें, रामदास गौड़ व सालिगराम भार्गव (1914).

[52] डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने रामदास गौड़ से इन पुस्तकों का सम्पादन का ज़िम्मा सँभालने का आग्रह किया था. ये किताबें 1922 से राष्ट्रीय शिक्षावली ग्रंथमाला के रूप में प्रकाशित होनी शुरू हुईं. देखें, रामदास गौड़ (सं.) [1922 (1979) वि.सं.]; रामदास गौड़ ने 1927 में लड़कियों की शिक्षा से संबंधित एक किताब भी लिखी थी, जो हिंदी-गौरव-ग्रंथमाला के अंतर्गत प्रकाशित हुई थी. देखें, रामदास गौड़ (1927 [1984 वि.सं.]).

आउटलाइन ऑफ़ साइंस, जोकि 1921 में चार भागों में छपी थी, और हार्म्सवर्थ की *पॉपुलर साइंस* (आर्थर मी द्वारा सम्पादित इस ग्रंथमाला के सात भाग 1913 में छपे थे) की विषयवस्तु का अनुकरण करते हुए लिखी गयी थी।[53] आठ भागों में बँटी हुई *विज्ञानहस्तामलक* में कुल 30 अध्याय थे, जो ब्रह्माण्ड, सौर मण्डल और पृथ्वी; धरती पर जीवन की उत्पत्ति, विकास के सिद्धांतों और मानव-विकास के चरणों; जीवविज्ञान और मानव शरीर; मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण; भौतिकी, अणुविज्ञान, सापेक्षिकता के सिद्धांत; रसायनविज्ञान; पर्यावरण, जलवायु विज्ञान, जीवाणुविज्ञान, वनस्पति विज्ञान; विज्ञान और प्रकृति से संबंधित थे। आख़िरी अध्याय में रामदास गौड़ ने चार्ल्स डार्विन, थॉमस एडिसन, अल्बर्ट आइंस्टीन, न्यूटन, फ़ैराडे और साथ ही आर्यभट, भास्कराचार्य, जगदीश चंद्र बोस, डॉ. गणेश प्रसाद, श्रीनिवास रामानुजन, प्रफुल्ल चंद्र राय और मेघनाद साहा सरीखे वैज्ञानिकों का संक्षिप्त जीवन-परिचय भी दिया था।[54]

रामदास गौड़ ने अपने अध्यक्षीय भाषण में तकनीकी शिक्षा और प्रशिक्षण पर ज़ोर देते हुए कहा कि यंत्रों के साथ-साथ रोज़गारी के काम भी सिखाए जाएँ जिससे सीखते ही छात्र कुछ-न-कुछ कमाने लायक़ हो जाए।[55] इंग्लैंड की संस्था सिटी ऐंड गिल्ड्स ऑफ़ लंदन, जो वहाँ इच्छुक विद्यार्थियों को व्यावसायिक व तकनीकी प्रशिक्षण देती थी, के तर्ज़ पर रामदास गौड़ ने हिंदी साहित्य सम्मेलन से अनुरोध किया कि वह भी इस दिशा में पहल करे और विद्यार्थियों को प्रशिक्षित करने के लिए ऐसे ही कार्यक्रम आयोजित करे। उन्होंने ऐसे प्रशिक्षण में निम्न कार्यों को शामिल करने का सुझाव दिया : यंत्र-निर्माण, लोहे-पीतल-इस्पात की ढलाई, पानी चढ़ाना, बिजली और गैस से झाल लगाना, क़लई करना, किर्रे और चूड़ी काटना, इंजन मोटर, डायनमो आदि का अध्ययन, साबुन, मोमबत्ती, रंग, स्याही, वार्निश-रोगन आदि बनाना।[56]

इसी तरह 1935 में इंदौर में आयोजित हुई विज्ञान परिषद की अध्यक्षता करते हुए गोरख प्रसाद ने भी ऐसी पाठ्य-पुस्तकें लिखने पर ज़ोर दिया, जो लघु उद्योगों के निर्माण में लोगों को दिशा दे सकें और जिन्हें पढ़ कर लोगों को ऐसे उद्योगों के बारे में पर्याप्त जानकारी भी मिल सके। ये किताबें उद्योगों में विज्ञान के प्रयोग के बारे में लोगों को जागरूक बनाने का काम करतीं।[57] ऐसी किताबों के प्रकाशन हेतु गोरख प्रसाद ने हिंदी साहित्य सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभा सरीखी संस्थाओं से पहल करने का अनुरोध किया। साथ ही, इसे बढ़ावा देने हेतु उन्होंने भारत सरकार और देसी रियासतों से इन संस्थाओं को आर्थिक मदद देने का भी आग्रह किया।

उल्लेखनीय है कि इलाहाबाद विश्वविद्यालय में गणित के शिक्षक रहे गोरख प्रसाद ने बनारस हिंदू युनिवर्सिटी से गणित की पढ़ाई की और आगे चलकर एडिनबरा विश्वविद्यालय से उन्होंने शोध किया था। विश्वविद्यालय स्तर पर गणित पढ़ने वाले छात्रों के लिए उन्होंने अंग्रेज़ी में ज्यामिति और कलन-अवकलन सरीखे विषयों पर पाठ्य-पुस्तकें लिखी थीं।[58] साथ ही, उन्होंने काष्ठ कला और फलों के संरक्षण जैसे विषयों पर भी हिंदी में किताबें लिखी थीं।[59] आगे चलकर उन्होंने भारतीय ज्योतिष के इतिहास पर भी एक किताब लिखी, जिसमें उन्होंने भारत में ज्योतिष विद्या के विकास का विस्तृत विवरण दिया। इस किताब में उन्होंने वेदांग ज्योतिष, आर्यभट, वराहमिहिर और भास्कराचार्य के सिद्धांतों; *सूर्यसिद्धांत* और *सिद्धांतशिरोमणि*

[53] रामदास गौड़ (1936).
[54] वही : 457-468.
[55] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 37.
[56] वही : 37-38.
[57] वही : 43.
[58] देखें, गोरख प्रसाद (1939); गोरख प्रसाद एवं एच.सी. गुप्ता (1947); गोरख प्रसाद (1959).
[59] गोरख प्रसाद (1940).
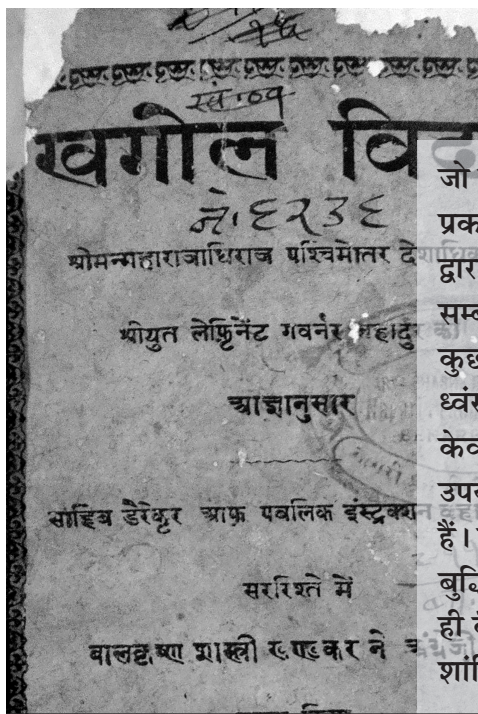
जो लोग विज्ञान और उसके ध्येय के बारे में शंका प्रकट कर रहे थे, ख़ासकर जापान में अमेरिका द्वारा परमाणु बम गिराए जाने के बाद, उन्हें सम्बोधित करते हुए डॉ. ब्रजमोहन ने कहा कि कुछ लोग कहते हैं कि विज्ञान का ध्येय ध्वंसात्मक है, विज्ञान हिंसा सिखाता है। यह तो केवल समझ का दोष है। हम किसी वस्तु का उपयोग कर सकते हैं, दुरुपयोग भी कर सकते हैं। हम उस वस्तु से कैसा काम लेते हैं, यह हमारी बुद्धि पर निर्भर है। उन्होंने आशा जताई कि शीघ्र ही वैज्ञानिक परमाणु शक्ति का रचनात्मक व शांतिपूर्ण कार्यों में प्रयोग कर दिखाएँगे।

सरीखी पुस्तकों, भारतीय और ग्रीक खगोलविद्या के तुलनात्मक अध्ययन; सवाई जय सिंह द्वारा निर्मित वेधशालाओं और भारतीय पंचांगों के बारे में विस्तारपूर्वक लिखा।[60] उनकी यह किताब शंकर बालकृष्ण दीक्षित द्वारा ज्योतिष पर मराठी में लिखी गयी पुस्तक से प्रेरित थी।

1937 में आयोजित हुए विज्ञान परिषद के अगले अधिवेशन की अध्यक्षता रामनारायण मिश्र ने की। हिंदी में भूगोल से जुड़ी कई किताबें लिखने वाले रामनारायण मिश्र इलाहाबाद से ही *भूगोल* नामक पत्रिका भी प्रकाशित करते थे। अपने संक्षिप्त अध्यक्षीय भाषण में रामनारायण मिश्र ने हिंदी में भूगोल से संबंधित किताबों के अभाव और मानकों पर खरा उतरने वाले मानचित्रों के अभाव की ओर लोगों का ध्यान खींचा। विज्ञान परिषद का अगला अधिवेशन शिमला में 1938 में आयोजित हुआ, जिसके सभापति फूलदेव सहाय वर्मा थे। कलकत्ता विश्वविद्यालय से रसायन की पढ़ाई करने वाले फूलदेव सहाय वर्मा आचार्य प्रफुल्ल चंद्र राय के शिष्य रह चुके थे। 1919 में वे बनारस हिंदू युनिवर्सिटी में विज्ञान के शिक्षक बने और हिंदी में वैज्ञानिक विषयों पर लेखन में अत्यंत सक्रिय रहे। *विज्ञान* में लिखने के अलावा उन्होंने हिंदी की प्रसिद्ध पत्रिकाओं जैसे *सुधा, सरस्वती, प्रभा* और *वीणा* आदि में भी वैज्ञानिक विषयों पर लेख लिखे। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के विकास और उसके प्रचार-प्रसार का एक विस्तृत खाक़ा प्रस्तुत किया। विज्ञान के शिक्षण में मातृभाषा की वकालत करते हुए वर्मा ने कहा कि मातृभाषा में दी जाने वाली शिक्षा साक्षरता के विस्तार और ज्ञान-विज्ञान के प्रसार में सहायक सिद्ध होगी।[61]

---

[60] गोरख प्रसाद (1956).

[61] बारह वर्ष बाद कोटा में आयोजित विज्ञान परिषद के अंतिम अधिवेशन (1950) की अध्यक्षता करते हुए कविराज प्रताप सिंह ने भी प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर मातृभाषा में ही शिक्षा देने की बात कही.

हिंदी को भारत की राष्ट्रभाषा कहते हुए फूलदेव सहाय वर्मा ने हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के अभाव पर निराशा जतायी। आधुनिक युग को विज्ञान युग बताते हुए उन्होंने रोज़मर्रा के जीवन में विज्ञान की भूमिका का उल्लेख किया। चिकित्सा, रेडियो, सिनेमा, मोटरगाड़ी, हवाई जहाज़ और रेलगाड़ी सरीखी आधुनिक विज्ञान की उपलब्धियों को उन्होंने विज्ञान के अद्भुत चमत्कार की संज्ञा दी।[62] विज्ञान परिषद के पूर्व सभापतियों रामदास गौड़ और गोरख प्रसाद की तरह ही फूलदेव सहाय वर्मा ने हिंदी में ऐसे वैज्ञानिक साहित्य के निर्माण पर भी ज़ोर दिया, जिससे युवाओं को स्व-रोजगार की प्रेरणा मिले और बेरोजगारी की समस्या पर क़ाबू पाया जा सके। उन्होंने स्वयं भी हिंदी में रसायनविज्ञान की पाठ्यपुस्तकें लिखने के अलावा औद्योगिक रसायन जैसे विज्ञान के व्यावहारिक पक्ष से जुड़ी किताबें लिखी थीं।[63] मसलन, उन्होंने चीनी और गन्ना, पेट्रोलियम, उर्वरक जैसे विषयों पर किताबें लिखीं।[64]

विज्ञान परिषद के कई सभापतियों ने अपने अध्यक्षीय भाषण में आर्थिक पुनर्निर्माण और औद्योगीकरण से जुड़ी चर्चाओं को ख़ासा महत्त्व दिया। उल्लेखनीय है कि बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में भारत में विज्ञान के विमर्श पर लिखते हुए इतिहासकार बेंजामिन ज़कारिया ने यह दर्शाया है कि कैसे बीसवीं सदी के भारत में विज्ञान संबंधी विमर्श विकास के उभरते हुए विमर्श का हिस्सा बन गया। ध्यान देने की बात है कि बेंजामिन ज़कारिया विकास संबंधी विमर्श को सिर्फ़ आर्थिक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रखते, बल्कि इसमें वे प्रगति और पुनर्निर्माण के विचार और भविष्य के सम्भावनाशील भारत की संकल्पना को भी शामिल करते हैं।[65]

विज्ञान परिषद और हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के प्रसार की योजनाएँ

फूलदेव सहाय वर्मा ने अपने अध्यक्षीय भाषण में हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के प्रकाशन की दस वर्षीय योजना उपस्थित लोगों के सामने रखी। इस योजना के संचालन हेतु उन्होंने एक लाख रुपये का कोष जमा करने का सुझाव दिया और इसके लिए युक्त प्रांत, बिहार और मध्य भारत जैसे हिंदीभाषी प्रांतों को इसमें सहयोग देने को कहा। फूलदेव सहाय वर्मा ने यह सुझाव दिया कि इस कोष से सौ-दो सौ पृष्ठों वाली लगभग सौ पुस्तकों की एक ग्रंथमाला तैयार करने का लक्ष्य होना चाहिए। उन्होंने इन पुस्तकों को ऐसी सरल हिंदी में लिखने का सुझाव दिया जो आम पाठकों को आसानी से समझ में आ सके। जहाँ एक ओर वर्मा हिंदी में वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण के पक्षधर थे, वहीं उन्होंने रसायनों और रासायनिक समीकरणों को अंतरराष्ट्रीय पद्धति के अनुरूप ही लिखने का आग्रह किया। उक्त योजना के अंतर्गत हिंदी में वैज्ञानिक विषयों पर पुस्तकें लिखने वाले लेखकों को आर्थिक प्रोत्साहन देने का भी प्रस्ताव था।[66] साथ ही, इसमें क़रीब पाँच हज़ार ऐसे विज्ञानप्रेमी सदस्यों को जोड़ने का भी सुझाव था, जो इस ग्रंथमाला की सभी पुस्तकों की एक प्रति ख़रीदें।

इस दस वर्षीय योजना से सहमत होते हुए 1939 में विज्ञान परिषद की अध्यक्षता करते हुए गोरख प्रसाद ने विज्ञान परिषद, हिंदी साहित्य सम्मेलन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा व हिंदुस्तानी

---

[62] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 49.

[63] देखें, फूलदेव सहाय वर्मा (1932). अपने अध्यक्षीय भाषण में छात्रों को व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण देने की वकालत करते हुए उन्होंने वर्धा योजना की सिफ़ारिशों की भी सराहना की.

[64] फूलदेव सहाय वर्मा (1938); फूलदेव सहाय वर्मा (1955 क); फूलदेव सहाय वर्मा (1955 ख); फूलदेव सहाय वर्मा (1958); फूलदेव सहाय वर्मा (1960).

[65] ज़कारिया (2001) : 3694.

[66] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 51-52.

एकेडमी से इस दिशा में पहल करने का अनुरोध किया।[67] *एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका* की तर्ज़ पर गोरख प्रसाद ने हिंदी में एक विज्ञान विश्वकोश और हिंदी-अंग्रेज़ी का एक मानक शब्दकोश प्रकाशित करने का भी सुझाव दिया। उनका मानना था कि इससे हिंदी में वैज्ञानिक विषयों पर लिखने वाले विद्वानों का कार्य सुगम हो सकेगा। फूलदेव सहाय वर्मा की भाँति ही महावीरप्रसाद श्रीवास्तव ने भी विज्ञान परिषद के उदयपुर अधिवेशन (1945) की अध्यक्षता करते हुए हिंदी में वैज्ञानिक पुस्तकों की एक ग्रंथमाला प्रकाशित करने का सुझाव दिया। उन्होंने इस ग्रंथमाला में दो तरह की किताबों के प्रकाशन का सुझाव दिया। विज्ञान के विद्यार्थियों, शिक्षकों व विद्वानों के लिए एक ढंग की किताबें और किसानों, दस्तकारों व आम पाठकों के समझ में आने वाली दूसरी तरह की किताबें।[68]

1946 में एक ऐसी ही योजना का प्रस्ताव चंद्रशेखर वाजपेयी ने विज्ञान परिषद के करांची अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए रखा। भारत में, ख़ासकर हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के प्रचार-प्रसार हेतु रूस और जापान से प्रेरणा लेते हुए चंद्रशेखर वाजपेयी ने पाँचवर्षीय योजना का प्रारूप पेश किया।[69] उनकी इस योजना में निम्न प्रस्ताव शामिल थे : पहले दो वर्ष विज्ञान की सभी शाखाओं से संबंधित पारिभाषिक व तकनीकी शब्दावली एकत्र करना; तीसरे वर्ष एक सम्मेलन आयोजित करना जिसका लक्ष्य अब तक जुटाई गयी पारिभाषिक शब्दावली से हिंदी में विज्ञान शब्दकोश का निर्माण करना होता और जिसमें शिक्षक, वैज्ञानिक और विज्ञान के छात्र भी शामिल होते; चौथे वर्ष में इस शब्दकोश का इस्तेमाल करते हुए विज्ञान की लोकप्रिय किताबें तैयार कराना, जो सौ पृष्ठों से अधिक की न हों, और स्कूलों व आम पाठकों के बीच इन किताबों का प्रचार करना; पाँचवें वर्ष में वैज्ञानिकों और विशेषज्ञों से हिंदी में विज्ञान की प्रामाणिक पुस्तकें लिखवाना।

विज्ञान परिषद, विज्ञान और राष्ट्र-निर्माण

डॉ. सत्यप्रकाश (1900-1995) ने पुणे में 1940 में आयोजित विज्ञान परिषद के वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षता की। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में रसायनविज्ञान के शिक्षक रहे डॉ. सत्यप्रकाश ने महज़ 18 वर्ष की उम्र से ही विज्ञान परिषद की पत्रिका *विज्ञान* में लिखना आरम्भ किया और आगे चलकर वे इसके सम्पादक भी रहे। कार्बनिक व अकार्बनिक रसायन से संबंधित पाठ्यपुस्तकें लिखने के साथ-साथ उन्होंने विज्ञान की लोकप्रिय किताबें भी लिखीं। उनकी एक ऐसी ही किताब थी, *सृष्टि की कथा,* जिसका प्रकाशन हिंदी साहित्य सम्मेलन ने किया था। हाईस्कूल के छात्रों के लिए लिखी गयी यह किताब डॉ. सत्यप्रकाश द्वारा ब्रह्माण्ड के बारे में समय-समय पर *विज्ञान* में लिखे गये लेखों का संकलन थी। इस किताब में संकलित लेखों में बेहद सरल भाषा में ब्रह्माण्ड, अंतरिक्ष, आकाशगंगा, धूमकेतु व उल्कापिण्ड, पृथ्वी की उत्पत्ति, उसमें होने वाली भूगर्भीय हलचलों, पृथ्वी पर पौधों और पशु-जगत के विकास जैसे विषयों पर विस्तारपूर्वक लिखा गया था।[70] 1953 में बिहार राष्ट्रभाषा परिषद द्वारा डॉ. सत्यप्रकाश को विज्ञान की भारतीय परम्परा विषय पर व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया गया। इस विषय पर उन्होंने कुल पाँच व्याख्यान दिये, जो अगले वर्ष *वैज्ञानिक विकास की भारतीय परम्परा* शीर्षक से प्रकाशित हुए। इस किताब में उन्होंने निम्न विषयों पर विस्तार से लिखा :

---

[67] वही : 56-57 तथा आगे.

[68] आम पाठकों, दस्तकारों व किसानों को ध्यान में रखकर लिखी गयी किताबों में कृषि, पशुपालन, पशुओं को होने वाली बीमारियाँ और उनकी रोकथाम, खाद्य संरक्षण, मानव स्वास्थ्य जैसे विषयों पर किताबें लिखने का प्रस्ताव भी महावीरप्रसाद श्रीवास्तव ने रखा. देखें, मिश्र (सं.) (1986) : 182-183.

[69] वही : 203-204.

[70] सत्यप्रकाश (1937). इन विषयों में और अधिक जिज्ञासा रखने वाले विद्यार्थियों व पाठकों को उन्होंने अपनी इस किताब के साथ-साथ रामदास गौड़ की *विज्ञानहस्तामलक* और गोरख प्रसाद की किताब *सौर-परिवार* पढ़ने का भी सुझाव दिया.

वैदिक काल में कृषि, रथ, धातु और खनिज, अंक-पद्धति, ऋतु और पंचांग;[71] आदिकालीन भारत में गणित और ज्योतिषविद्या, विशेषकर वेदांग ज्योतिष का विकास; अंकगणित के संदर्भ में शून्य के प्रयोग, स्थान-मान (प्लेस वैल्यू) की धारणा, बीजगणित, ज्यामिति का विकास; आयुर्वेद व रसायन का इतिहास; आर्यभट, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त, वराहमिहिर आदि के योगदानों की चर्चा। मौर्यकालीन भारत में विज्ञान की चर्चा करते हुए उन्होंने कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* में उल्लिखित संदर्भों का भी उल्लेख किया।[72]

1940 में पुणे में जब सत्यप्रकाश अपना अध्यक्षीय भाषण दे रहे थे, तब द्वितीय विश्वयुद्ध को शुरू हुए एक वर्ष बीत चुका था। इसी संदर्भ में उन्होंने कहा : 'संसार की वैज्ञानिक परिषदों के समक्ष आज दो प्रश्न उपस्थित हो रहे हैं। पहला तो यह कि अपने-अपने देश की आर्थिक सम्पन्नता किस प्रकार बढ़ाई जाए, और दूसरा युद्ध के लिए क्या-क्या तैयारियाँ की जाएँ।'[73] भारतीय विज्ञान कांग्रेस, इंडियन एकेडमी ऑफ़ साइंसेज़, इंडियन केमिकल सोसाइटी व विज्ञान परिषद सरीखी वैज्ञानिक संस्थाओं के महत्त्व पर ज़ोर देते हुए उन्होंने कहा कि इस वैज्ञानिक युग में राष्ट्रों का परिचालन वैज्ञानिक परिषदों द्वारा ही हो सकता है। चूँकि विज्ञान परिषद का यह अधिवेशन पुणे में हो रहा था, इसलिए डॉ. सत्यप्रकाश ने मराठी में वैज्ञानिक साहित्य के विकास की भी विस्तृत चर्चा की और मराठी में वैज्ञानिक साहित्य की प्रगति को संतोषजनक बताया।[74] उन्होंने भौतिकी, रसायन, खगोलविज्ञान, वनस्पति विज्ञान जैसे विषयों पर मराठी में लिखी गयी पुस्तकों का उल्लेख किया। साथ ही, उन्होंने उन मराठी विद्वानों की भी सराहना की, जिन्होंने वैज्ञानिक विषयों पर हिंदी में पुस्तकें लिखी थीं। इस क्रम में उन्होंने वा.वि. भागवत, शंकरराव जोशी, गजानन जागीरदार और केशव अनंत पटवर्धन आदि का विशेष रूप से ज़िक्र किया।

उन्होंने यह भी कहा कि हिंदी के पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग अन्य प्रांतों में भी हो और उच्च कोटि के वैज्ञानिक साहित्य के लिए सब प्रांत हिंदी को माध्यम बनाएँ।[75] यहाँ सत्य प्रकाश द्वारा भारत की अन्य प्रांतीय भाषाओं में हिंदी के पारिभाषिक शब्द अपनाने और उच्च कोटि के वैज्ञानिक साहित्य के लिए हिंदी को ही माध्यम बनाने की बात अतार्किक जान पड़ती है। मसलन, मराठी के संदर्भ में स्वयं डॉ. सत्यप्रकाश ने अपने भाषण में यह स्वीकार किया कि मराठी का वैज्ञानिक साहित्य हिंदी से कहीं अधिक समृद्ध है। जाहिर है कि मराठी में वैज्ञानिक शब्दावली भी हिंदी से कहीं अधिक विकसित रही होगी, फिर क्यों मराठी के लेखकों से हिंदी के ही पारिभाषिक शब्द अपनाने की अपेक्षा रखनी चाहिए, जब उनकी अपनी भाषा हिंदी से कहीं अधिक समृद्ध हो। साथ ही, हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के विकास पर ध्यान केंद्रित करने की बजाय यह कहना भी कहीं से भी तर्कसंगत नहीं जान पड़ता कि सभी प्रांतों में उच्चतर वैज्ञानिक साहित्य के लिए हिंदी को ही माध्यम बनाया जाए। सत्यप्रकाश ने इस बात पर भी खेद जताया कि हिंदी भाषी प्रांतों के छात्रों की योग्यता व प्रतिभा के बावजूद उन्हें विज्ञान के क्षेत्र में मौलिक शोध करने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता।

अगस्त 1947 में देश के आज़ाद होने के बाद विज्ञान परिषद का पहला अधिवेशन बम्बई में हुआ, जिसकी अध्यक्षता डॉ. ब्रजमोहन ने की। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण के शुरू में ही इस अवसर के ऐतिहासिक महत्त्व का उल्लेख किया और वैज्ञानिक समुदाय से आह्वान किया :

---

[71] सत्यप्रकाश (1954) : 1-37.

[72] वही : 99-156.

[73] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 66.

[74] हालाँकि सत्यप्रकाश ने मराठी में विज्ञान की पत्रिकाओं के अभाव पर अपनी निराशा भी व्यक्त की. युरोप से तुलना करते हुए उन्होंने कहा कि भारत विज्ञान की पत्रिकाओं की संख्या के मामले में अभी युरोप से काफ़ी पीछे है. वही : 68.

[75] वही : 69.

> हमारे वैज्ञानिक कल तक जो अनुसंधान करते थे, वह अधिकतर स्वांत: सुखाय के हेतु ही होता था। हमारे अनुसंधानों का कोई बहिर्मुखी लक्ष्य कदाचित् ही होता हो। परंतु अब स्थिति बदल गयी है। हममें से प्रत्येक को अपने जीवन के प्रत्येक क्षण में यह अनुभव करना चाहिए कि हम देश के अंग हैं और महत्त्वपूर्ण अंग हैं, यदि हम देश कि आध्यात्मिक अथवा भौतिक किसी प्रकार की उन्नति में थोड़ी बहुत सहायता भी दे सकें तो उससे कदापि मुँह न मोड़ें। आज से देश के वैज्ञानिकों का जीवन देश के लिए है।[76] (ज़ोर मेरा)

जो लोग विज्ञान और उसके ध्येय के बारे में शंका प्रकट कर रहे थे, ख़ासकर जापान में अमेरिका द्वारा परमाणु बम गिराए जाने के बाद, उन्हें सम्बोधित करते हुए डॉ. ब्रजमोहन ने कहा कि कुछ लोग कहते हैं कि विज्ञान का ध्येय ध्वंसात्मक है, विज्ञान हिंसा सिखाता है। यह तो केवल समझ का दोष है। हम किसी वस्तु का उपयोग कर सकते हैं, दुरुपयोग भी कर सकते हैं। हम उस वस्तु से कैसा काम लेते हैं, यह हमारी बुद्धि पर निर्भर है। उन्होंने आशा जताई कि शीघ्र ही वैज्ञानिक परमाणु शक्ति का रचनात्मक व शांतिपूर्ण कार्यों में प्रयोग कर दिखाएँगे।

दो वर्ष बाद विज्ञान परिषद के हैदराबाद अधिवेशन (1949) के सभापति श्रीरंजन ने अपने अध्यक्षीय भाषण में विज्ञान के बारे में कुछ ऐसी ही सकारात्मक उम्मीद व्यक्त की। कृषिविज्ञानी श्रीरंजन ने अपने भाषण में खाद्यान्न संकट पर चर्चा करते हुए वैज्ञानिक खेती के ज़रिये इस संकट को दूर करने और भारत को सभी खाद्य पदार्थों के मामले में आत्मनिर्भर बनाने पर ज़ोर दिया।[77] उन्होंने कृषि के क्षेत्र में हो रहे नवीनतम अनुसंधानों का ब्यौरा भी अपने भाषण में दिया। इस क्रम में उन्होंने भारत में वैज्ञानिक अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए वैज्ञानिक व औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) के योगदान की सराहना की और शांति स्वरूप भटनागर, मेघनाद साहा, सी.वी. रमन, होमी जहाँगीर भाभा सरीखे वैज्ञानिकों को भी राष्ट्र-निर्माण के कार्य में उनके उल्लेखनीय योगदान के लिए सराहा।

भाषा का प्रश्न, वैज्ञानिक शब्दावली का निर्माण और विज्ञान परिषद

हिंदी-उर्दू के सवाल पर अपनी राय रखते हुए डॉ. सत्यप्रकाश ने अपने अध्यक्षीय भाषण में उर्दू पर जमकर हमला बोला। रस्मी तौर पर यह कहने के बाद कि मैं तो यह चाहता हूँ कि उर्दू अपने ढंग पर उसी प्रकार फले-फूले जैसे भारत की अन्य प्रांतीय भाषाएँ, उन्होंने उर्दू को हिंदी की राह का रोड़ा बताने से गुरेज़ न किया : पर उर्दू को हिंदी की राष्ट्रीयता में रोड़ा बनकर न अटकना चाहिए। उर्दू के समर्थन को उन्होंने यह कहते हुए पाकिस्तान की धारणा का समर्थन बताया कि राष्ट्रभाषा की दृष्टि से प्रत्येक प्रांत में हिंदी के साथ-साथ उर्दू को ले जाना प्रत्येक स्थान में एक पाकिस्तान बनाना है। उर्दू पढ़ने को निरर्थक बताते हुए उन्होंने कहा :

> मैं तो संयुक्त प्रांत में भी यह चाहता हूँ कि लोग उर्दू को भूल जावें। यह मैं हिंदुओं और मुसलमानों दोनों से कहूँगा। फ़ारसी और अरबी का पढ़ना तो मेरी समझ में एक अर्थ रखता है पर उर्दू पढ़ना तो निरर्थक है।[78]

---

[76] वही : 209.

[77] वही : 250 तथा आगे. बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में भारत में आर्थिक योजनाओं और विकास संबंधी विमर्श के बेहतरीन ऐतिहासिक विश्लेषण हेतु देखें, ज़कारिया (2005).

[78] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 75. 1944 में दिये गये अपने अध्यक्षीय भाषण में भी सत्यप्रकाश ने हिंदी-उर्दू के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए उर्दू के लेखकों को आड़े हाथों लिया. उन्होंने उर्दू के लेखकों पर हिंदी और उर्दू के बीच फ़ासला बढ़ाने का और उर्दू में फ़ारसी और अरबी शब्दों के अत्यधिक इस्तेमाल का आरोप लगाया. वहीं दूसरी ओर हिंदी के संदर्भ में बोलते हुए उन्होंने हिंदी में संस्कृत शब्दों के व्यवहार को सहज और नैसर्गिक बताया.

हिंदुस्तानी को ख़ारिज करते हुए सत्यप्रकाश ने कहा कि हिंदी या उर्दू का एकीकरण हिंदुस्तानी नहीं है। हिंदुस्तानी बाज़ारू, कामचलाऊ चीज़ है, और उसकी रूप-रेखा निर्धारित करने के लिए किसी आचार्य की आवश्यकता नहीं है।[79] उन्होंने आगे यह भी जोड़ा कि हिंदुस्तानी का वितण्डा व्यर्थ है। इसी क्रम में उन्होंने बिहार हिंदुस्तानी समिति की उन सिफ़ारिशों की भी जमकर आलोचना की, जिसमें समिति ने वैज्ञानिक शब्द प्रचलित भारतीय स्रोतों से ग्रहण करने और अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक शब्दावली अपनाने का सुझाव दिया था। और इन दोनों उपायों के अतिरिक्त आख़िरी उपाय के रूप में संस्कृत, अरबी व फ़ारसी से शब्द-भण्डार से पारिभाषिक शब्द लेने का सुझाव दिया था। सत्यप्रकाश का मत था कि हिंदी, मराठी, गुजराती, बंगाली और द्रविड़ भाषाओं के लिए संस्कृतगर्भित पदावली ही उचित होगी।

भाषा और पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण का यह प्रश्न विज्ञान परिषद के जयपुर अधिवेशन (1944) में भी उठा, जब डॉ. सत्यप्रकाश ने अपने अध्यक्षीय भाषण में सेंट्रल एडवाइजरी बोर्ड ऑफ़ एजुकेशन द्वारा बनाई गयी वैज्ञानिक शब्दावली समिति की सिफ़ारिशों की चर्चा की। 1940 में गठित की गयी इस समिति के अध्यक्ष थे सर अकबर हैदरी और उनके नाम पर इस समिति हैदरी समिति के नाम से भी जाना जाता है। इस समिति के अन्य सदस्य थे : के. रमन्नी मेनन, एस.सी. त्रिपाठी, डबल्यू.एच.एफ़. स्ट्रांग, यू.एम. दौदपोटा, ज़ियाउद्दीन अहमद और डॉ. अमरनाथ झा।[80]

हैदरी समिति की नियुक्ति इन मुद्दों के समाधान ढूँढ़ने के लिए हुई थी : ऐसी साझी वैज्ञानिक शब्दावली की सम्भावना तलाशना जो भारत भर में इस्तेमाल हो सके; विभिन्न वैज्ञानिक विषयों के लिए मानक शब्दावलियों के निर्माण पर विचार; और इस संदर्भ में बोर्ड ऑफ़ रिफरेंस के गठन की ज़रूरत पर विचार। समिति ने यह तय किया कि वह वैज्ञानिक शब्दावली के प्रश्न को शिक्षा के सभी स्तरों के संदर्भ में देखने की कोशिश करेगी।[81] वैज्ञानिक शब्दावली के संबंध में समिति ने तकनीकी शब्दों के सटीक, सहज और सुबोध होने पर ज़ोर दिया और पूरे देशभर के लिए एक साझी वैज्ञानिक शब्दावली की ज़रूरत का उल्लेख करते हुए तकनीकी शब्दों में एकरूपता लाने का सुझाव दिया। इसी क्रम में, समिति ने अंतरराष्ट्रीय शब्दों को स्वीकार करने और उनके साथ भारतीय मूल के शब्दों का प्रयोग करने का भी परामर्श दिया। अंकों व वैज्ञानिक संकेतों के संबंध में समिति ने ज़ोर देकर कहा कि सभी वैज्ञानिक विषयों में अंतरराष्ट्रीय संकेतों व अंकों का प्रयोग ही उचित होगा।[82] वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण की दिशा में कार्य करने हेतु समिति ने विशेषज्ञ उप-समितियों के साथ सेंट्रल बोर्ड ऑफ़ रिफरेंस के गठन की भी सिफ़ारिश की।

भारत में वैज्ञानिक शब्दावली निर्माण की दिशा में हो रहे प्रयासों का उदाहरण देते हुए सत्यप्रकाश ने 1944 में जयपुर में दिये अपने अध्यक्षीय भाषण में उस्मानिया विश्वविद्यालय की परिषद के उन प्रस्तावों का भी ज़िक्र किया, जो मई 1920 में पारित किये गये थे।[83] उस्मानिया विश्वविद्यालय की परिषद ने वैज्ञानिक विषयों के लिए अंतरराष्ट्रीय शब्दावली के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय सूत्रों और संकेतों को उसी रूप में अपनाने का सुझाव दिया। परिषद ने उर्दू में वैज्ञानिक शब्दों का निर्माण जारी रखने के साथ यह सुझाव भी दिया कि इन अंतरराष्ट्रीय तकनीकी शब्दों को अंग्रेज़ी व उर्दू दोनों भाषाओं में लिखा जाना चाहिए। उल्लेखनीय है कि उस्मानिया विश्वविद्यालय ने विज्ञान, इतिहास, राजनीति, साहित्य जैसे तमाम विषयों की पाठ्यपुस्तकें उर्दू में तैयार करने में अग्रणी योगदान दिया था।

---

[79] वही : 77.

[80] इनके अलावा समिति के तीन अतिरिक्त सदस्य भी थे : डॉ. मुज़फ़्फ़रुद्दीन क़ुरैशी, डॉ. अब्दुल हक़, और डॉ. शांतिस्वरूप भटनागर.

[81] *रिपोर्ट ऑफ़ द साइंटिफ़िक टर्मिनोलॉजी कमेटी ऑफ़ द सेंट्रल एडवाइजरी बोर्ड ऑफ़ एजुकेशन इन इंडिया* (1941) : 3.

[82] वही : 4.

[83] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 150 तथा आगे.

इतिहासकार कविता डाटला के अनुसार, उस्मानिया विश्वविद्यालय ने उर्दू को आधुनिकता के साँचे में ढालने में, उसे एकरूपता देने व उसके मानकीकरण में प्रमुख भूमिका निभायी। और उर्दू को ऐसी भाषा में तब्दील किया जो रोज़मर्रा के जीवन के साथ ही प्रशासनिक, साहित्यिक, वैज्ञानिक, दार्शनिक व अकादमिक ज़रूरतों को पूरा कर सकती थी।[84]

भारत में वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण संबंधी प्रयासों का हवाला देते हुए डॉ. सत्यप्रकाश ने मद्रास सरकार द्वारा गठित श्रीनिवास शास्त्री समिति का भी उल्लेख किया। दरअसल श्रीनिवास शास्त्री समिति का गठन जून 1940 में मद्रास सरकार द्वारा दक्षिण भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दावली के प्रयोग में एकरूपता लाने व उसके मानकीकरण की दिशा में सुझाव देने के लिए किया गया था। वी.एस. श्रीनिवास शास्त्री इस समिति की अध्यक्षता कर रहे थे।[85] दक्षिण भारत के संदर्भ में वैज्ञानिक शब्दावली की राजनीति, अस्मिता-निर्माण के साथ उसके संबंध और श्रीनिवास शास्त्री समिति के सुझावों से उपजे विवाद पर टिप्पणी करते हुए इतिहासकार ए.आर. वेंकटचेलपति ने लिखा है कि वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण की यह प्रक्रिया महज़ शब्द-निर्माण तक ही सीमित नहीं थी, बल्कि यह तमिल अस्मिता के निर्माण और उसे पारिभाषित करने से भी गहरे जुड़ी हुई थी।[86] श्रीनिवास शास्त्री समिति ने अपनी रिपोर्ट में निम्न सुझाव दिये थे :

पहले से प्रचलित विदेशी तकनीकी शब्दों को यथावत अपनाना,
सभी दक्षिण भारतीय भाषाओं के लिए साझी और मानक तकनीकी शब्दावली तैयार करना और मूल अंग्रेज़ी शब्दों को कोष्ठक में लिखना,
शेष शब्दों के लिए अंग्रेज़ी के तकनीकी शब्दों को अपनाना और उसे दक्षिण भारतीय भाषाओं में यथावत लिखना,
वैज्ञानिक पुस्तकों के लिए अंतरराष्ट्रीय अंकों, संकेतों व सूत्रों को अपनाना,
प्रत्येक दक्षिण भारतीय भाषा में प्रचलित तकनीकी शब्दावली की सूची बनाने हेतु विशेष समिति बनाना।[87]

लेकिन ध्यान देने की बात है कि तकनीकी शब्दावली के प्रश्न पर विज्ञान परिषद के सभापतियों में सभी एकमत नहीं थे। उदयपुर अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए महावीरप्रसाद श्रीवास्तव ने हिंदी की वैज्ञानिक पुस्तकों में अंग्रेज़ी के तकनीकी शब्दों को अपनाने का सुझाव दे रहे लोगों की आलोचना की। चंद्रशेखर वाजपेयी की भी कुछ यही राय थी और उन्होंने संस्कृत धातुओं का इस्तेमाल करते हुए हिंदी में वैज्ञानिक शब्द गढ़ने का सुझाव दिया।[88] डॉ. ब्रजमोहन ने हिंदी में वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण हेतु एक संस्था बनाने का भी सुझाव दिया, जिसमें विज्ञान के विशेषज्ञों के साथ-साथ हिंदी व संस्कृत के विद्वान भी शामिल किये जाने थे।

वैज्ञानिक शब्दावली का प्रश्न हिंदी साहित्य सम्मेलन के सभापतियों के भाषण में भी कई बार उठा। 1947 में सम्मेलन के बम्बई अधिवेशन की अध्यक्षता कर रहे राहुल सांकृत्यायन ने हिंदी में वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण का समर्थन किया, पर उन्होंने उन शब्दों को अपनाने का आग्रह किया

[84] कविता डाटला (2013) : 10.

[85] श्रीनिवास शास्त्री समिति के अन्य सदस्य थे : सी.आर. रेड्डी, आर.एम. स्टेटहम, एच.सी. स्टैग, ए. डैनियल, टी. सूर्यनारायण, जी.जे. सोमायाजी, टी.सी. श्रीनिवास आयंगर, एन. वेंकटराम अय्यर, टी. राम पिशारोडी, सी.एल. कौशल्या, सी.एस. अनंतपद्मनाभ, डॉ. मुहम्मद अब्दुल हक़, वी. राजगोपाल अय्यर और प्रो. के. स्वामीनाथन.

[86] ए.आर. वेंकटचेलपति (2006) : 143-162.

[87] *रिपोर्ट ऑफ़ द साइंटिफ़िक टर्मिनोलॅजी कमेटी* (1941) : 22-25.

[88] मसलन, वाजपेयी ने कार्बोहाइड्रेट, ऑक्सीजन और नाइट्रोजन के लिए क्रमश: कार्बोज, ओषजन और नेत्रजन के प्रयोग की सिफ़ारिश की. उल्लेखनीय है कि ये शब्द पहले से ही *विज्ञान* के लेखों में इस्तेमाल हो रहे थे.

जो पहले से प्रचलन में थे।[89] वहीं सम्मेलन के मेरठ अधिवेशन की अध्यक्षता कर रहे सेठ गोविंद दास ने हिंदी में वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण हेतु संस्कृत के शब्दों के प्रयोग का समर्थन किया।

वैज्ञानिक व पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण की दिशा में एक प्रयास डॉ. रघुवीर ने भी किया था, जिसका ज़िक्र 1948 में मेरठ में हुए विज्ञान परिषद के सभापति भास्कर गोविंद घाणेकर ने अपने भाषण में किया था। भास्कर घाणेकर भी हिंदी में वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण हेतु संस्कृत के प्रयोग के पक्षधर थे, उनके अनुसार ऐसा करना इस शब्दावली को अन्य प्रांतों में भी स्वीकार्यता दिलाने में सहायक होगा।[90] बनारस हिंदू युनिवर्सिटी के मेडिकल कॉलेज में शिक्षक रहे घाणेकर ने ख़ुद भी जीवाणु विज्ञान, आयुर्वेद, आधुनिक चिकित्सा-पद्धति (एलोपैथी) पर लिखी अपनी किताबों में हिंदी में वैज्ञानिक शब्दावली गढ़ने का काम बख़ूबी किया था।[91] 1944 में जीवाणु विज्ञान पर लिखी गयी अपनी किताब में उन्होंने सूक्ष्मजीवों व जीवाणुओं के बारे में लिखने के साथ-साथ जीवाणु विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली को हिंदी में गढ़ने का अत्यंत चुनौतीपूर्ण काम भी अंजाम दिया।[92] समयाभाव के चलते वे इस किताब में दी गयी हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली की सूची नहीं बना सके थे, पर अपनी अगली पुस्तक में उन्होंने इस कमी की भी भरपाई कर दी। यह किताब मूत्राशय की बीमारियों से संबंधित थी और 1954 में प्रकाशित हुई थी।[93]

आयुर्वेद और विज्ञान परिषद

भास्कर गोविंद घाणेकर की तरह ही विज्ञान परिषद के कुछ अन्य सभापति भी आयुर्वेद के विशेषज्ञ थे, इनमें पण्डित जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल और कविराज प्रताप सिंह उल्लेखनीय हैं। वैद्य रहे इन सभापतियों के भाषण में हमें भारत में आयुर्वेद के भविष्य के प्रति चिंता तो दिखती ही है, साथ ही उनमें आधुनिक पश्चिमी चिकित्सा पद्धति के बरअक्स आयुर्वेद की क्षमता और रोगों के निदान में इसके प्रभावकारी होने को लेकर भी विचार व्यक्त किये गये। औपनिवेशिक उत्तर भारत के संदर्भ में आधुनिक चिकित्सा पद्धति और आयुर्वेद व यूनानी अथवा तिब्ब जैसी चिकित्सा पद्धतियों के बीच प्रतिस्पर्धा का अध्ययन माधुरी शर्मा व सीमा अलावी जैसे इतिहासकारों ने किया है।[94] इन इतिहासकारों ने देशज चिकित्सा पद्धतियों व आधुनिक चिकित्सा पद्धति के जटिल अंतर्संबंधों और उनके बीच के तनावों व अंतर्विरोधों को रेखांकित किया है। ये तनाव और जटिलताएँ हमें विज्ञान परिषद के सभापतियों के भाषणों में भी दिखाई देती हैं।

पण्डित जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल आयुर्वेद से जुड़े हुए वे पहले व्यक्ति थे, जो विज्ञान परिषद के सभापति बने। विज्ञान परिषद के अबोहर अधिवेशन (1941) की अध्यक्षता करने वाले जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल *प्रयाग समाचार* के सम्पादक रह चुके थे। साथ ही, उन्होंने आयुर्वेद से संबंधित एक पत्रिका *सुधानिधि* का प्रकाशन-सम्पादन भी किया था।[95] आयुर्वेद को अवैज्ञानिक कहने वाले चिकित्सकों और विद्वानों को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा कि अनादिकाल से आयुर्वेद की वैज्ञानिकता पर किसी को संदेह नहीं है ... किंतु भारत में इस समय पश्चिमी डॉक्टरों का एक वर्ग

---

[89] प्रेमनारायण शुक्ल (सं.) (1987) : 96-98.

[90] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 237.

[91] *सुश्रुत संहिता* का सम्पादन करने के अलावा भास्कर गोविंद घाणेकर ने आयुर्वेदिक शिक्षा, ख़ून से जुड़ी बीमारियों, मानव शरीर में मूत्र-निर्माण व मूत्राशय की संरचना का गहराई से अध्ययन किया था.

[92] देखें, भास्कर गोविंद घाणेकर (1944 [2001 वि.स.]).

[93] भास्कर गोविंद घाणेकर (1954 [2011 वि.स.]).

[94] देखें, माधुरी शर्मा (2012); सीमा अलावी (2007).

[95] उल्लेखनीय है कि इस समय हिंदी में *सुधानिधि* के अलावा आयुर्वेद की कई पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही थीं. मसलन, *आयुर्वेदकेशरी, धन्वंतरि, वैद्य सम्मेलन पत्रिका, अनुभूतयोगमाला, राकेश, वैद्य, अश्विनीकुमार* और *स्वास्थ्य संदेश* आदि.

ऐसा है जो स्वार्थवश आयुर्वेद को अवैज्ञानिक कहने का दम्भ करता है, उन्हीं के कुछ अनुयायी भारतीय भी भ्रांतचित्त-से हो रहे हैं। विज्ञान को परिभाषित करते हुए उन्होंने कहा : जिसकी एक परम्परा हो, जिसकी शास्त्रीय शृंखला अबाधित हो, और जो सत्य हो उसे विज्ञान कहते हैं।[96] आगे उन्होंने वेदों को ही भारतीय ज्ञान-विज्ञान का स्रोत बताया। उन्होंने कहा कि भारतीय ज्ञानस्रोत का उद्गम वेदों से होता है, वेद अखिल ज्ञान के भण्डार माने जाते हैं। उन्हीं वेदों से हमारे विज्ञान और आयुर्वेद का अविच्छिन्न संबंध है। आयुर्वेद को पश्चिमी चिकित्सा पद्धति से श्रेष्ठ बताते हुए शुक्ल ने कहा :

> आयुर्वेद की निदान पद्धति इतनी सशास्त्र, गम्भीर और पूर्ण है कि संसार की सारी शैलियों का उसमें अंतर्भाव होता है। औषधि और आहार-विहार का निरूपण करने में हेतु विपरीत, व्याधि विपरीत, हेतु-व्याधि विपरीत...का गहन विचार होता है। उसके द्रव्य-विज्ञान में द्रव्यों का गुण निर्धारण करते समय रस-वीर्य-विपाक और प्रभाव का इतना सूक्ष्म विवेचन किया जाता है कि अभी तक आधुनिक विज्ञान की वहाँ तक पूरी पहुँच नहीं हो पाई है।[97]

उनके भाषण में दो बातें देखने को मिलती हैं, एक तो आयुर्वेद व अतीत में भारतीय विज्ञान की उपलब्धियों का अतिशय गौरवगान और उसका महिमामण्डन करते हुए उसे आधुनिक पश्चिमी विज्ञान से श्रेष्ठ बताना। दूसरे, यह दावा करना कि आधुनिक पश्चिमी विज्ञान की खोजों और आविष्कारों से प्राचीन भारतीय पहले से ही अवगत थे। विज्ञान और भारत के अतीत के संदर्भ में ऐसे दावे करने की प्रवृत्ति उन्नीसवीं सदी से ही दिखाई देने लगती है, जब स्वामी दयानंद ने वेदों के संदर्भ में कुछ ऐसे ही दावे किये थे। जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल ने विज्ञान परिषद में दिये अपने अध्यक्षीय भाषण में कई जगह ऐसी ही बातें कही हैं, मसलन एक जगह वे कहते हैं :

> महाभारत में जब हम पढ़ते थे कि संजय को बादरायण व्यास की बताई युक्ति या उनकी दी हुई शक्ति से हस्तिनापुर में बैठे हुए महाभारत का दृश्य दिखाता था और वहाँ के कथोपकथन सुनाई पढ़ते थे, तब हमें आश्चर्य होता था; किंतु आज आलोक-शक्ति और रेडियो ने उसे बहुत कुछ विश्वास योग्य बना दिया है।[98]

ऐसा मानने-सोचने वाले जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल कोई अकेले शख़्स नहीं थे। उन्नीसवीं-बीसवीं सदी के भारतीय वैज्ञानिकों में भी दिखाई देने वाली ऐसी प्रवृत्ति का अध्ययन करते हुए डेविड आर्नाल्ड ने लिखा है कि भारतीय वैज्ञानिकों ने ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में पश्चिमी देशों के बौद्धिक और तकनीकी श्रेष्ठता के दावे पर सवाल उठाते हुए अतीत की ओर रुख़ किया। साथ ही, पश्चिमी विद्वानों द्वारा भारतीय विज्ञान के पिछड़ेपन की ओर ध्यान खींचने पर उसके जवाब में भी भारतीय वैज्ञानिकों में अतीत की उपलब्धियों को दुहराने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है।[99] इसी संदर्भ में, इतिहासकार बेंजामिन ज़कारिया आगाह करते हैं कि सांस्कृतिक भिन्नता और विमर्शों की विविधता के प्रति पर्याप्त संवेदनशील होते हुए भी इतिहासकारों को पेशेवर वैज्ञानिकों द्वारा विज्ञान के व्यवहार और आर्य समाज जैसे संगठनों द्वारा किये जाने वाले वैदिक विज्ञान के दावों में फ़र्क़ करना चाहिए और इन्हें एक साथ मिलाने से सावधानीपूर्वक बचना चाहिए।[100] कारण कि तत्कालीन वैज्ञानिक समुदाय ने भी हर उस बात या विचार को विज्ञान नहीं माना, जिसके विज्ञान होने का दावा दूसरे लोग कर रहे थे।

यह प्रवृत्ति उस ऐतिहासिक प्रक्रिया का नतीजा थी, जिसके अंतर्गत अठारहवीं सदी के आख़िरी दशकों में प्राच्यवादियों द्वारा शुरू किये गये प्राचीन हिंदू ग्रंथों के अध्ययन से प्रेरित होकर उन्नीसवीं

---

[96] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 90.
[97] वही : 91.
[98] वही : 113.
[99] डेविड आर्नाल्ड (1999), दाऊद अली (सं.) : 156.
[100] बेंजामिन ज़कारिया (2001) : 3689.

सदी के हिंदू बुद्धिजीवियों ने यह घोषित किया कि उन प्राचीन ग्रंथों में वैज्ञानिक सत्य अंतर्निहित था और जिसे उन्होंने हिंदू विज्ञान की संज्ञा दी। इस संदर्भ में इतिहासकार ज्ञान प्रकाश लिखते हैं कि हिंदू बुद्धिजीवियों ने आधुनिक विज्ञान के प्राधिकार के आलोक में प्राचीन ग्रंथों की तार्किकता की पुनर्व्याख्या की। साथ ही, हिंदू धर्म को विज्ञानसंबंधी ज्ञान और व्यवहारों से युक्त बताते हुए उसे सभी भारतीयों की विरासत घोषित कर दिया। वे आगे जोड़ते हैं कि अतीत से विकसित और संवर्धित होने वाले वर्तमान की जगह अतीत की पुनरावृत्ति के रूप में की जाने वाली वर्तमान की संकल्पना ने हिंदू विज्ञान के विमर्श को सभी समकालीन संदर्भों और आम जीवन के हरेक पक्ष में दख़ल देने की ज़मीन तैयार की।[101]

जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल और भास्कर गोविंद घाणेकर के बाद कविराज प्रताप सिंह विज्ञान परिषद के सभापति बनने वाले तीसरे आयुर्वेद विशेषज्ञ थे। उन्होंने कोटा में 1950 में आयोजित हुए विज्ञान परिषद के अंतिम अधिवेशन की अध्यक्षता की। अपने भाषण में आयुर्वेद और पश्चिमी चिकित्सा पद्धति की तुलना करते हुए उन्होंने आयुर्वेद को श्रेष्ठ बताया। उनका मत था :

> आज का पाश्चात्य चिकित्सक मण्डल शमन चिकित्सा का पुजारी है, उसका ध्यान रेजिमेंटल ट्रीटमेंट की तरफ़ है, वह रोग देखता है, रोगी की व्यवस्था, उसकी मानसिक और शारीरिक स्थिति की परवाह नहीं करता है। इधर आर्य चिकित्सक रोगी की प्रकृति का अध्ययन करता है, उसके शरीर की उष्ण, अवयव गति और आश्लेषण क्रिया का ज्ञान प्राप्त कर शोधन और शमन विधान का प्रयोग करता है।[102]

अपने भाषण के अंत में प्रताप सिंह ने आयुर्वेदिक शिक्षा के प्रसार हेतु सम्मेलन से अनुरोध किया कि साहित्य सम्मेलन प्रयाग में एक आयुर्वेदिक शिक्षणालय अष्टांग आयुर्वेद शिक्षा के लिए निर्माण करें। उन्होंने इस दिशा में प्रयत्न करने हेतु पुरुषोत्तम दास टण्डन से भी आग्रह किया। उल्लेखनीय है कि उन्नीसवीं सदी के आख़िरी दशकों में और बीसवीं सदी के आरम्भ से ही इस दिशा में प्रयास हो रहे थे। बंगाल में गंगाधर राय और गंगा प्रसाद सेन, महाराष्ट्र में शंकर शास्त्री पदे, मद्रास में गोपालाचारी, केरल में पी.एस. वैरियर जैसे वैद्य व विशेषज्ञ आयुर्वेद को पुनर्जीवन देने के काम में लगे हुए थे। औपनिवेशिक केरल में देशज चिकित्सा पद्धति के पुनरुद्धार से जुड़े आंदोलन, जिसका नेतृत्व कोट्टक्कल के पी.एस. वैरियर कर रहे थे, का अध्ययन करने वाले इतिहासकार के.एन. पणिक्कर ने ऐसे आंदोलनों के संदर्भ में तीन महत्त्वपूर्ण बातें रेखांकित की हैं, जो उत्तर भारत के संदर्भ में भी लागू होती हैं : पहला, ये आंदोलन देशज चिकित्सा पद्धति और देशज ज्ञान के पुनरुद्धार, उसे सुव्यवस्थित करने और उसके प्रसार से जुड़े थे। दूसरे, वैद्यों/आयुर्वेदिक चिकित्सकों को प्रशिक्षण देने हेतु प्रशिक्षण संस्थाओं के निर्माण पर ज़ोर। तीसरा, औषधियों के निर्माण और वितरण की प्रक्रिया पर ध्यान देना।[103]

देशज चिकित्सा पद्धति के पुनरुद्धार का मुद्दा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मंच से भी उठा था। दिसम्बर 1920 में नागपुर में हुए कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में आयुर्वेद व यूनानी चिकित्सा पद्धति के समर्थन में पारित एक प्रस्ताव में कहा गया :

> भारत में आयुर्वेद व यूनानी चिकित्सा पद्धति के व्यापक प्रसार और उपयोगिता को देखते हुए इस कांग्रेस का यह मत है कि इन पद्धतियों को लोकप्रिय बनाने हेतु देशवासियों द्वारा प्रयास किये जाने चाहिए। साथ ही, देशज चिकित्सा पद्धति के शिक्षण और उसके अनुरूप उपचार की व्यवस्था हेतु कॉलेज और अस्पतालों की स्थापना भी की जानी चाहिए।[104]

---

[101] ज्ञान प्रकाश (2000) : 90–91.

[102] शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986) : 260–261.

[103] के.एन. पणिक्कर (1995) : 161.

[104] ए.एम. जैदी (सं.) (1980) : 665.

देशज चिकित्सा पद्धतियों का मुद्दा राष्ट्रीय योजना समिति के सामने भी उठा। 1938 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में गठित राष्ट्रीय योजना समिति की 29 उप-समितियों में एक समिति का दायित्व राष्ट्रीय स्वास्थ्य से संबंधित योजना बनाना था।[105] राष्ट्रीय स्वास्थ्य उप-समिति की रिपोर्ट में देशज चिकित्सा पद्धतियों की प्रासंगिकता, व्यावहारिकता आदि पर विचार किया गया। इस उपसमिति की अध्यक्षता कर रहे थे : कर्नल साहिब सिंह सोखी और डॉ. जे.एस. नेरुरकर।[106] हालाँकि इस उपसमिति में देशज चिकित्सा पद्धतियों का कोई प्रतिनिधि सदस्य नहीं था, फिर भी इस रिपोर्ट में देशज चिकित्सा पद्धति से जुड़ी काफ़ी महत्त्वपूर्ण बातें कही गयीं। रिपोर्ट में वैद्यों और हकीमों को भी उचित प्रशिक्षण देकर उन्हें सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली का हिस्सा बनाने की बात कही गयी। पर उपसमिति के कुछ सदस्य इससे सहमत नहीं थे और उन लोगों ने अपनी अलग से लिखी गयी टिप्पणियों में वैद्यों और हकीमों की ही नहीं, देशज चिकित्सा पद्धति की उपयोगिता पर भी सवाल खड़े किये।[107] रिपोर्ट में यह भी कहा गया कि देशज चिकित्सा पद्धतियों के ज्ञान को सदियों से क्रमबद्ध और व्यवस्थित नहीं किया गया और न ही उनकी नैदानिक पद्धति और उपचार विधियों और उनकी प्रभावशालिता का कोई सुव्यवस्थित अध्ययन हुआ है।[108] वहीं समिति के कुछ सदस्यों का मानना था कि आधुनिक पश्चिमी चिकित्सा पद्धति ही विज्ञान की पद्धति के अनुरूप प्रयोगों और प्रेक्षणों पर आधारित एकमात्र पद्धति है। उनके अनुसार सार्वजनिक स्वास्थ्य और चिकित्सा की समूची प्रणाली में देशज चिकित्सा पद्धति आधुनिक पश्चिमी चिकित्सा पद्धति की सहायक हो सकती है। उन सदस्यों का यह भी सुझाव था कि देशज चिकित्सा पद्धति की भी आधुनिक विज्ञान की कसौटियों और मानकों पर परीक्षा की जानी चाहिए।[109]

हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा अपने वार्षिक अधिवेशनों के साथ आयोजित की जाने वाली विज्ञान परिषद के अधिवेशन 1950 के बाद बंद हो गये। इसका कारण यह था कि हिंदी साहित्य सम्मेलन 1950 से स्वामित्व के प्रश्न को लेकर और सम्मेलन के संविधान व नियमावली की व्याख्या को लेकर लम्बे समय तक चलने वाली क़ानूनी लड़ाई का मंच बन गया। सम्मेलन से जुड़ा यह मामला इलाहाबाद उच्च न्यायालय में सुना गया। इस क़ानूनी विवाद की वजह से दो दशकों से भी अधिक समय तक हिंदी साहित्य सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन स्थगित रहे।

निष्कर्ष

इस लेख में औपनिवेशिक भारत में हिंदी में वैज्ञानिक लेखन की विकास-यात्रा का विस्तृत विवरण दिया गया है। उन्नीसवीं सदी में राजा शिवप्रसाद, अम्बिका प्रसाद, बालकृष्ण शास्त्री खण्डकर जैसे विद्वानों के साथ ही नागरी प्रचारिणी सभा जैसे संगठनों ने भी इस ऐतिहासिक प्रक्रिया में योगदान दिया। इस विकास यात्रा को हमने औपनिवेशिक भारत के अन्य हिस्सों में हो रही तत्संबंधी गतिविधियों और साथ ही उर्दू में हो रहे ऐसे ही अन्य प्रयासों के साथ तुलनात्मक ढंग से देखने की कोशिश भी की। ध्यान देने की बात है कि भारत के अतीत से जुड़ी वैज्ञानिक उपलब्धियों को एक रणनीति के तहत फिर से तलाशने की कोशिश भी इस समय ज़ोर पकड़ने लगी थी। आचार्य प्रफुल्ल चंद्र राय,

---

[105] राष्ट्रीय योजना समिति में नेहरू की भूमिका के विश्लेषण हेतु देखें, बिद्युत चक्रवर्ती (1992) : 275-287; प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में राष्ट्रीय योजना समिति के योगदान के विस्तृत विवरण के लिए देखें, जगदीश एन. सिन्हा (1995), रॉय मैकल्योड व दीपक कुमार (सं.) : 250-264.

[106] चिकित्सा और फ़ार्मेसी के क्षेत्र में साहिब सिंह सोखी के योगदान के लिए देखें, हरकिशन सिंह (2016) : 238-247.

[107] देखें, जे.सी. राय का लेख, के.टी. शाह (सं.) (1948) : 58-70.

[108] के. टी. शाह (सं.) (1948) : 50.

[109] वही : 58.

ब्रजेंद्र नाथ सील द्वारा लिखी पुस्तकें इसका उदाहरण हैं, हिंदी में भी ऐसे प्रयास हो रहे थे। इन प्रयासों की अपनी जटिलताएँ थीं और इनमें द्वैध (दुचित्तेपन) का भाव भी दिखाई पड़ता है।

हिंदी में वैज्ञानिक लेखन की चर्चा करते हुए इस लेख में इलाहाबाद में स्थापित विज्ञान परिषद की गतिविधियों और उसके मुखपत्र *विज्ञान* में छपे लेखों, उनकी विषयवस्तु की भी विस्तृत चर्चा की गयी है। साथ ही, हिंदी में वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण के प्रयासों, उसमें आने वाली कठिनाइयों, भाषा की राजनीति का भी विश्लेषण किया गया। हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा आयोजित विज्ञान परिषद के सभापतियों के भाषणों में उठने वाले मुद्दों, उनके सरोकारों, राष्ट्र-निर्माण में विज्ञान की भूमिका, तकनीकी और प्रौद्योगिकी के विकास, विज्ञान के प्रचार-प्रसार की कोशिशों की चर्चा करते हुए इस लेख में आधुनिक विज्ञान, उसके सकारात्मक-नकारात्मक पक्षों पर उन सभापतियों के विचारों की भी चर्चा की गयी है। उल्लेखनीय है कि औद्योगिक अनुसंधान और तकनीकी प्रशिक्षण के लिए विज्ञान के प्रयोग पर इस दौरान ज़ोर दिया जा रहा था। भारत में औद्योगीकरण के राष्ट्रीय कार्यक्रम को शुरू करने के लिए पश्चिमी विज्ञान की उपलब्धियों और योजना-निर्माण पद्धतियों के इस्तेमाल की बात भी होने लगी थी।

आयुर्वेद के संदर्भ में बात करें तो विज्ञान परिषद के सभापतियों द्वारा दिये गये भाषणों में आधुनिक चिकित्सा पद्धति के बरअक्स देशज चिकित्सा पद्धति विशेषकर आयुर्वेद की प्रासंगिकता व उपयोगिता, इन दो पद्धतियों के बीच व्याप्त तनाव की झलक भी हमें मिलती है। इस लेख से यह भी स्पष्ट होता है कि औपनिवेशिक भारत के आख़िरी दशकों में विज्ञान और वैज्ञानिक भाषा का इस्तेमाल वैधता के दावे की पुष्टि के लिए किया जाने लगा था। इस समय जहाँ एक ओर हमें भारत में विज्ञान और वैज्ञानिक प्रयोगों में बढ़ती हुई दिलचस्पी देखने को मिलती है। आधुनिक विज्ञान की उपलब्धियों के प्रति सम्मोहन, आश्चर्य और जिज्ञासा का भाव दिखाई पड़ता है। वहीं दूसरी ओर, हमें इसी दौरान विज्ञान को भारत की सांस्कृतिक संरचना का आवयविक अंग साबित करने के प्रयास भी देखने को मिलते हैं।

संदर्भ

अम्बिका प्रसाद (1884), *पहिला जुग़राफ़िया,* नवल किशोर प्रेस, लखनऊ.

उलराइक स्टार्क (2008), *एन एंपायर ऑफ़ बुक्स : द नवल किशोर प्रेस ऐंड द डिफ़्यूजन ऑफ़ द प्रिंटेड वर्ल्ड इन कॉलोनियल इंडिया,* परमानेंट ब्लैक, रानीखेत.

ए.आर. वेंकटचेलापति (2006), *इन दोज़ डेज़ देयर वाज नो कॉफी,* योडा प्रेस, नयी दिल्ली.

ए.एम. जैदी (सं.) (1980), द *एनसायक्लोपीडिया ऑफ़ द इंडियन नेशनल कांग्रेस,* 1916-1920, खण्ड-II, एस. चंद, दिल्ली.

एस. इरफ़ान हबीब (1991), 'प्रमोटिंग साइंस ऐंड इट्स वर्ल्ड-व्यू इन द मिड-नाइंटीन्थ सेंचुरी इंडिया', दीपक कुमार (सं.), *साइंस ऐंड एम्पायर : एस्सेज़ इन इंडियन कांटेक्स्ट,* अनामिका पब्लिशर्स, नयी दिल्ली.

------ (1995), 'साइंस, टेक्निकल एजुकेशन ऐंड इंडस्ट्रियलाइज़ेशन', रॉय मैकल्योड एवं दीपक कुमार, *टेक्नोलॉजी ऐंड द राज,* सेज़ पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली.

कविता डाटला (2013), द *लैंग्वेज़ ऑफ़ सेकुलर इस्लाम : उर्दू नैशनलिज़्म ऐंड कॉलोनियल इंडिया,* ओरियंट ब्लैकस्वान, नयी दिल्ली.

के.एन. पणिक्कर (1995), *कल्चर, आइडियालॉजी, हेजेमनी : इंटेलेक्चुअल्स ऐंड सोशल कांशसनेस इन कॉलोनियल इंडिया,* तूलिका, नयी दिल्ली.

के.टी. शाह (सं.) (1948), *नैशनल हेल्थ (रिपोर्ट ऑफ़ द सब-कमेटी),* नैशनल प्लानिंग सीरीज, वोरा ऐंड कं., बम्बई.

गोरख प्रसाद (1939), *टेक्स्टबुक ऑन इंटीग्रल कैलकुलस,* पोथीशाला, इलाहाबाद.

------- (1940), *लकड़ी पर पॉलिश,* कला प्रेस, इलाहाबाद.

------- (1956), *भारतीय ज्योतिष का इतिहास,* प्रकाशन ब्यूरो, लखनऊ.

------- (1959), *टेक्स्टबुक ऑन डिफरेंशियल कैलकुलस,* पोथीशाला, इलाहाबाद.

गोरख प्रसाद एवं एच.सी. गुप्ता (1947), *टेक्स्टबुक ऑन कोऑर्डिनेट ज्यामेट्री,* पोथीशाला, इलाहाबाद.

जगदीश एन. सिन्हा (1995), 'टेक्नोलॉजी फॉर नैशनल रीकंस्ट्रक्शन : द नैशनल प्लानिंग कमेटी, 1938-1949', रॉय मैकल्योड एवं दीपक कुमार, *टेक्नोलॉजी ऐंड द राज़,* सेज पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली.

ज्ञान प्रकाश (2000), *अनदर रीज़न : साइंस ऐंड द इमैजिनेशन ऑफ़ मॉडर्न इंडिया,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.

डेविड आर्नाल्ड (1999), 'अ टाइम फ़ॉर साइंस : पास्ट ऐंड प्रेजेंट इन द रीकंस्ट्रक्सन ऑफ़ हिंदू साइंस, 1860-1920', दाऊद अली (सं.), *इन्वोकिंग द पास्ट,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.

दीपक कुमार (2006), *साइंस ऐंड द राज़ : अ स्टडी ऑफ़ ब्रिटिश इंडिया,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.

ध्रुव रैना एवं एस. इरफ़ान हबीब (1989), 'कल्चरल फ़ाउंडेशंस ऑफ़ अ नाइंटींथ सेंचुरी मैथमेटिकल प्रोजेक्ट', *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* 24(37).

------- (1991), 'टेक्निकल इंस्टीट्यूट्स इन कॉलोनियल इंडिया : कला भवन, बड़ौदा (1890-1910)', *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* 26(46).

------- (2004), *डोमेस्टीकेटिंग मॉडर्न साइंस : अ सोशल हिस्ट्री ऑफ़ साइंस ऐंड कल्चर इन कॉलोनियल इंडिया,* तूलिका, नयी दिल्ली.

निहालकरण सेठी (सं.) (1931), *हिंदी वैज्ञानिक शब्दावली गणित विज्ञान,* इंडियन प्रेस, प्रयाग.

पी. राय (सं.) (1956), *हिस्ट्री ऑफ़ केमिस्ट्री इन ऐंशियंट ऐंड मिडिवल इंडिया इनकारपोरेटिंग द हिस्ट्री ऑफ़ हिंदू केमिस्ट्री बाय आचार्य प्रफुल्ल चंद्र राय,* इंडियन केमिकल सोसाइटी, कलकत्ता.

प्रतीक चक्रवर्ती (2001), साइंस, मोरैलिटी, ऐंड नैशनलिज़म : द मल्टीफेसेटेड प्रोजेक्ट ऑफ़ महेंद्र लाल सरकार, *स्टडीज़ इन हिस्ट्री,* 17 (2).

------ (2004), *वेस्टर्न साइंस इन मॉडर्न इंडिया : मेट्रोपॉलिटन मेथड्स, कॉलोनियल प्रैक्टिसेज़,* परमानेंट ब्लैक, नयी दिल्ली.

प्रेमनारायण शुक्ल (सं.) (1987), *सभापतियों के भाषण,* भाग III, हिंदी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद.

फूलदेव सहाय वर्मा (1932), *साधारण रसायन,* भाग 2, वाराणसी.

------- (1938), *मिट्टी के बर्तन,* विज्ञान परिषद, प्रयाग.

------- (1955 क), *ईख और चीनी,* बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना.

------- (1955 ख), *रबड़,* बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना.

------- (1958), *पेट्रोलियम,* बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना.

--------(1960), *खाद और उर्वरक,* सूचना विभाग, लखनऊ.

बालकृष्ण शास्त्री खण्डकर (1860 क), *खगोल विद्या,* गवर्नमेंट प्रेस, इलाहाबाद.

------ (1860 ख), *भूगोल विद्या,* गवर्नमेंट प्रेस, इलाहाबाद.

बिद्युत चक्रवर्ती (1992), 'जवाहरलाल नेहरू ऐंड प्लानिंग, 1938-41 : इंडिया ऐट क्रॉसरोड्स', *मॉडर्न एशियन स्टडीज़,* 26(2).

बी.एस. गोयल एवं जे.डी. शर्मा (1987), *अ स्टडी ऑफ़ द इवोल्यूशन ऑफ़ द टेक्स्टबुक्स,* एनसीईआरटी, नयी दिल्ली.

बेंजामिन ज़कारिया (2001), यूजेज़ ऑफ़ साइंटिफिक आर्ग्युमेंट : द केस ऑफ़ डिवेलपमेंट इन इंडिया, 1930-1950 *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* 36(39).

------ (2005), *डिवेलपिंग इंडिया : एन इंटलेक्चुअल ऐंड सोशल हिस्ट्री 1930-50,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.

भास्कर गोविंद घाणेकर (1944 [2001 वि.स.]), *संक्षिप्त जीवाणु विज्ञान,* बनारस हिंदू युनिवर्सिटी, बनारस.

------- (1954 [2011 वि.स.]), *मूत्र के रोग,* नया संसार प्रेस, बनारस.

मनु गोस्वामी (2004), *प्रोड्यूसिंग इंडिया : फ्रॉम कॉलोनियल इकॉनमी टू नैशनल स्पेस,* परमानेंट ब्लैक, नयी दिल्ली.

महावीर प्रसाद द्विवेदी रचनावली (1995), खण्ड 9, भारत यायावर (सं.), किताबघर, नयी दिल्ली.

माधुरी शर्मा (2012), *इंडीजीनस ऐंड वेस्टर्न मेडिसिन इन कॉलोनियल इंडिया,* फ़ाउंडेशन बुक्स, नयी दिल्ली.

रामदास गौड़ (1927 [1984 वि.स.), *कन्याओं की पोथी या कन्या सुबोधिनी,* गांधी-हिंदी-पुस्तक-भण्डार, प्रयाग.

------ (1936), *विज्ञानहस्तामलक अर्थात् सीधी-सादी भाषा में रोचक क्रम से अठारह विज्ञानों की कहानी,* हिंदुस्तानी एकेडमी, प्रयाग.

रामदास गौड़ (सं.) (1922 [1979 वि.स.), *पाँचवीं पोथी,* हिंदी पुस्तक एजेंसी, कलकत्ता.

रामदास गौड़ एवं सालिगराम भार्गव (1914), *विज्ञान प्रवेशिका,* भाग I, विज्ञान परिषद, प्रयाग.

रामविलास शर्मा (1977), *महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण,* राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली.

रिपोर्ट ऑफ़ द कमेटी एपॉइंटेड टु इग्जामिन द टेक्स्टबुक्स इन यूज़ इन इंडियन स्कूल्स (1878), होम सेक्रेटेरियट प्रेस, कलकत्ता.

रिपोर्ट ऑफ़ द साइंटिफ़िक टर्मिनोलॉजी कमेटी ऑफ़ द सेंट्रल एडवाइजरी बोर्ड ऑफ़ एजुकेशन इन इंडिया (1941), गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया प्रेस, नयी दिल्ली.

वसुधा डालमिया (1997 [2010]), द *नैशनलाइज़ेशन ऑफ़ हिंदू ट्रैडिशंस : भारतेंदु हरिश्चंद्र ऐंड नाइंटींथ सेंचुरी बनारस,* परमानेंट ब्लैक, रानीखेत.

वीर भारत तलवार (2005), *राजा शिवप्रसाद सितार-ए-हिंद,* साहित्य अकादेमी, नयी दिल्ली.

शिवगोपाल मिश्र (सं.) (1986), *हिंदी में विज्ञान लेखन : कुछ समस्याएँ,* हिंदी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद.

शिवप्रसाद (1859), *भूगोलहस्तामलक,* संस्कृत प्रेस, कलकत्ता.

श्यामसुंदर दास (सं.) (1906), द *हिंदी साइंटिफ़िक ग्लॉसरी,* मेडिकल हाल प्रेस, बनारस.

सत्यप्रकाश (1937), *सृष्टि की कथा,* हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग.

------- (1954), *वैज्ञानिक विकास की भारतीय परम्परा,* बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना.

सीमा अलावी (2007), *इस्लाम ऐंड हीलिंग : लॉस ऐंड रिकवरी ऑफ़ ऐन इंडो-मुस्लिम मेडिकल ट्रेडीशन 1600-1900,* परमानेंट ब्लैक, रानीखेत.

हरकिशन सिंह (2010), 'त्रिभुवनदास कल्याणदास गज्जर', *इंडियन जर्नल ऑफ़ हिस्ट्री ऑफ़ साइंस,* 45(3).

------- (2016), साहिब सिंह सोखी : ऐन एमिनेंट मेडिको-फ़र्मास्युटिकल प्रोफ़ेशनल, *इंडियन जर्नल ऑफ़ हिस्ट्री ऑफ़ साइंस,* 51(2).